www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक — साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ४०

सोमवार ७ जुलाई, '६९

सत्याग्रह में जबरदस्ती का स्थान नहीं

अगर हम अपनी इच्छा दूसरों पर लादें, तो हमारा अत्याचार उन मुट्ठीभर अंग्रेजों के अत्याचार से हजार गुना खराब होगा, जिन्होंने नौकरशाही को जन्म दिया है। उनका आतंकवाद एक ऐसे अल्पमत का लादा हुआ था, जो विरोध के बीच में अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करता था। हमारा आतंकवाद बहुमत का लादा हुआ होगा, इसलिए वह उससे ज्यादा बुरा और सचमुच ज्यादा दानवी होगा। इसलिए हमें अपने संग्राम में से हर प्रकार की जबरदस्ती को निकाल देना चाहिए। अगर हम असहयोग के सिद्धान्त पर स्वतंत्रतापूर्वक डटे रहनेवाले थोड़े ही लोग हों, तो हमें दूसरों को अपने विचार के बनाने की कोशिश में मरना पड़ सकता है। मगर यह तो कहा जायगा कि हमने अपने पक्ष का बचाव और प्रतिनिधित्व सचाई के साथ किया। लेकिन अगर हम अपने झंडे के नीचे दबाव से लोगों को भर्ती करेंगे, तो हम अपने ध्येय और ईश्वर से इन्कार करेंगे; और अगर हम थोड़े समय के लिए इसमें कामयाब भी होते दिखाई दें, तो भी यही कहा जायगा कि हमने ज्यादा बुरा आतंकवाद कायम करने में कामयाबी हासिल की है।

अगर हम असहिष्णुता से दूसरों के मत का दमन करेंगे, तो हमारा पक्ष पिछड़ जायगा। कारण उस सूरत में हमें यह कभी मालूम नहीं हो पायेगा कि कौन हमारे साथ है और कौन हमारे विरुद्ध। इसलिए सफलता की अपरिहार्य शर्त यह है कि हम अधिक से-अधिक मत-स्वातंत्र्य को प्रोत्साहन दें।[१]

सत्याग्रह का मर्म यह है कि जिन्हें अत्याचार सहना पड़े सिर्फ वे ही सत्याग्रह करें। ऐसे मामलों की कल्पना की जा सकती है, जिनमें सहानुभूतिपूर्ण कहा जा सकनेवाला सत्याग्रह करना उचित हो। सत्याग्रह की जड़ में विचार यह है कि अन्यायी का हृदय-परिवर्तन किया जाय, उसमें न्याय-बुद्धि जाग्रत की जाय और उसे भी यह दिखा दिया जाय कि पीड़ित पक्ष के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग के बिना अन्यायी मनचाहा अन्याय नहीं कर सकता। दोनों ही स्थितियों में अगर लोग अपने ध्येय के लिए कष्ट सहने को तैयार न हों, तो सत्याग्रह के रूप में किसी बाहरी सहायता से उनकी सच्ची मुक्ति नहीं हो सकती।[२]

सत्याग्रह के आन्दोलन मे लड़ाई का तरीका और रणनीति का चुनाव— अर्थात् आगे बढ़ें या पीछे हटें, सविनय कानून-भंग करें या रचनात्मक कार्य तथा शुद्ध निःस्वार्थ मानव-सेवा के द्वारा अहिंसक बल संगठित करें, आदि बातों का निर्णय परिस्थिति की विशेष आवश्यकताओं के अनुसार किया जाता है।[३]

मो. क. गांधी

(१) 'यंग इण्डिया' : २७-१०-'२१ (२) 'हरिजन' : १०-१२-'३८

(३) 'हरिजन' : २७-५-'३९

अन्य पृष्ठों पर

चेकोस्लोवाकिया —सम्पादकीय ४९१

गणनेतृत्व के नये युग में···—विनोबा ४९२

सर्वोदय : अतिवादी अहिंसक वामपंथ —मनमोहन चौधरी ४९३

परिचर्चा : आर्थिक सत्ता : नियंत्रण किसका ? —सिद्धराज ढड्ढा ४९४

—वद्रीप्रसाद स्वामी ४९५

—शिवनारायण शास्त्री ४९७

कोसानी में महिला-शिविर —क्रान्तिबाला ४९८

तरुण-शान्ति-सेना : दो पत्र ५००

तरुण-शान्ति-सेना शिविर, गोविन्दपुर —अमरनाथ ५०१

तरुण-शान्ति-सेना-शिक्षक-शिविर —कृष्णकुमार ५०२

अन्य स्तम्भ

संपादक के नाम चिट्ठी : आन्दोलन के समाचार

सत्याग्रह की खूबी यह है कि करनेवाले के पास वह सहज आता है। उसे खोजने के लिए किसीको कहीं बाहर नहीं जाना पड़ता। —मो० क० गांधी

सम्पादक
राधाकृष्ण

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

www.vinoba.in

सम्पादक के नाम चिट्ठी

आत्म-चिन्तन और विश्लेषण की आवश्यकता

सम्पादकजी,

आशा है, सर्वोदय-सेवकों के लिए लिखा गया यह पत्र आप "भूदान-यज्ञ" में अवश्य प्रकाशित करेंगे।

अप्रैल माह में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन तिरुपति में हुआ। इस अधिवेशन में सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का चुनाव हुआ। अधिवेशन की रिपोर्ट "भूदान-यज्ञ" में प्रकाशित हुई। रिपोर्ट में लिखा गया है कि "अधिवेशन में गिनती करने पर भाग लेनेवालों में प्रत्यक्ष काम में लगे प्रतिनिधियों की संख्या २५ से अधिक नहीं निकली।"

पढ़कर एक प्रश्न उठता है कि यह संस्था देश में इतना बड़ा आन्दोलन चला रही है, एक लाख के ऊपर देश में ग्रामदान घोषित हो चुके हैं, परन्तु अधिवेशन में इतने कम प्रतिनिधि क्यों आये? रिपोर्ट में लिखा है कि जो कार्यकर्ता आये, उनके रुख से उदासीनता स्पष्ट झलकती थी। इस उदासीनता का कारण गहरा होना चाहिए। यों निवृत्त-परायण व्यक्तियों में उदासीनता होती ही है। परन्तु सर्वोदय-विचार के लिए काम करनेवाली यह जमात कोई निवृत्त-परायण नहीं है।

इस उदासीनता का एक मुख्य कारण यह है कि सर्वोदय-विचार-क्रान्ति का आन्दोलन मानव-सम्बन्धों को सत्य, प्रेम, करुणा की आधार-शिला पर खड़ा करने का आन्दोलन है। लेकिन इसमें लगे व्यक्ति इन मूल्यों के प्रचार में इतनी अधिक शक्ति लगा देते हैं कि जीवन में उन पर अमल करने के लिए शक्ति बचती ही नहीं है। आपसी व्यवहार में भी सत्य, प्रेम और करुणा की अनुभूति नहीं होती है। इसका परिणाम यह होता है कि कार्यकर्ता संगठन के प्रति उदासीन हो जाता है।

आन्दोलन के मुख्य तीन कार्यक्रम हैं: ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना। देश भर में एक लाख से ऊपर की जो ग्रामदानों की संख्या है, उनमें सत्य का आधार छूट गया है। खादी-काम में लगे कार्यकर्ताओं से चर्चा करने पर पता चलता है कि खादी-काम में सत्य का आधार खोजने पर भी नहीं मिलेगा। शान्ति-सेना भी सत्य के आधार पर नहीं टिकी है। कहने का तात्पर्य यह है कि लच्छेदार रिपोर्टों में सत्य के पाँव उखड़ चुके हैं। कार्यकर्ता-वर्ग का काफी नैतिक पतन हो चुका है। दूसरे आधार, प्रेम और करुणा का तो नाम ही शेष रह गया है। सर्व सेवा संघ तथा खादी आदि संस्थाओं के कार्यों में लगे व्यक्ति और सर्वोदय-विचार के लिए काम करनेवाले व्यक्तियों के बीच प्रेम तो है, शायद दिखाने के लिए थोड़ा है भी, लेकिन करुणा तो है ही नहीं। हाँ, साधारण-सी स्पर्धा ऊपर के मार्गदर्शन करने का नाटक करनेवालों में अवश्य आ गयी है।

ऐसी स्थिति में कार्यकर्ताओं के मानस में उदासीनता एक अनिवार्य स्थिति है। परन्तु यह उदासीनता बहुत ही कम मात्रा में है, जब कि परिस्थिति इससे भी अधिक की है। प्रत्यक्ष काम में लगे २५ कार्यकर्ता संघ-अधिवेशन में पहुँचे, यह तो आज की परिस्थिति में बहुत अधिक हो गया। सर्वोदय-विचार में इतनी शक्ति है कि उदासीनता का वातावरण होते हुए भी काफी व्यक्ति सक्रिय हैं। विचार मनुष्य को प्रेरित कर रहा है। लेकिन संगठन और कार्यक्रमों का स्वरूप इन प्रेरित व्यक्तियों को जोड़ने में सक्षम साबित नहीं हो रहा है। इस दिशा में चिन्तन करना तथा इस स्थिति का विश्लेषण करना भी बुरा माना जाता है। सर्वोदय-प्रेमी इस कमी को महसूस कर इस पर चर्चा तथा आत्मविश्लेषण करके इसमें से निकलने का रास्ता नहीं खोजेंगे, तो इतने प्रखर विचार को भी लजा देंगे।

तिरुपति की यह घटना गहराई से विचार करने का निमंत्रण और चेतावनी, दोनों है। अधिक-से-अधिक इस सम्बन्ध में अपने विचार लिखेंगे तो अच्छा रहेगा।

आपका,
नरेन्द्र भाई

क्रान्ति जल्दी होनी चाहिए

कोई भी आन्दोलन हो, उसको मनुष्य अपने-अपने दृष्टिकोण से देखता है, और ऐसा होना स्वाभाविक है। विचारवान लोग सोचते हैं कि विनोबाजी की कल्पना का ग्राम कैसे बन सकता है, ऐसा ग्राम तो सात्त्विक गुण-प्रधान समाज ही बना सकता है, और सब लोगों में सात्त्विक गुण होना सम्भव नहीं है। युवक लोग कहते हैं कि यह बहुत लम्बा पथ है। संसार तेजी से बदल रहा है। यह हवाई जहाज और ऐटम का जमाना है, विनोबाजी पैदल यात्रा करवाते हैं। साम्यवादी कहते हैं कि विनोबाजी अहिंसा की राह बतलाते हैं, और यहाँ पूंजीपति गरीबों का शोषण करते हैं। सबसे पहले शोषण रुके, गरीबों को दम लेने का अवसर मिले। इन विचारों का समाधान हुए बिना सर्वोदय-आन्दोलन सार्वजनिक आन्दोलन नहीं बनेगा।

विनोबाजी सब कुछ जानते और समझते हैं, इसीलिए चेतावनी देते हैं कि काम जल्दी होना चाहिए। जल्दी काम न हुआ तो यह मिशन फेल हो जायेगा। क्रान्ति धीरे-धीरे नहीं हुआ करती है। देरी का कारण साधनों की कमी है। मुख्य साधन मनुष्य है। यह गरीब देश है। इसमें काम करनेवाले त्यागी होने चाहिए। यह अनपढ़ देश है और यहाँ के पढ़े-लिखे भी अनपढ़ हैं। इनको पढ़ने-लिखने में रुचि नहीं है। यदि ठीक शिक्षित होते तो देश में 'भूदान-यज्ञ' की ग्राहक-संख्या कम-से-कम पचास हजार होनी चाहिए थी। यहाँ के लोगों का बालक-स्वभाव है, और बालक-बुद्धि है। बालक को चाहिए सुनने के लिए कहानी। अर्थात् यहाँ बातें सुनानेवाले आदमी चाहिए।

आश्रम, जीन्द — स्वामी कृष्णानन्द

पठनीय मननीय

नयी तालीम

शैक्षिक क्रान्ति की अग्रदूत मासिकी

वार्षिक मूल्य : ६ रु०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

अग्रलेखीय

चेकोस्लोवाकिया

चेकोस्लोवाकिया आज कहाँ है ? कहाँ हैं उसके नेता, और क्या सोच रही है उसकी जनता ?

समाजवाद को मानवीय बनाने का जो अभियान चेकोस्लोवाकिया ने दुबचेक और उसके साथियों के नेतृत्व में शुरू किया था वह समाज-निर्माण के इतिहास में एक उज्ज्वल अध्याय था। रूसी आक्रमण के समय चेकोस्लोवाकिया की जनता ने, विशेष रूप से युवकों ने, जिस प्रतिकार-शक्ति का प्रदर्शन किया वह शान्ति की शक्ति की एक शानदार मिसाल थी। इसीलिए जब रूस ने चेकोस्लोवाकिया की भूमि पर अनधिकार प्रवेश किया तो स्वतंत्रता से प्रेम करनेवाले हर हृदय की भरपूर सहानुभूति चेकोस्लोवाकिया को मिली। दुनिया ने उसे विएतनाम और दक्षिण अफ्रीका के साथ रखा और इज्जत के साथ उसकी बहादुरी का बखान किया। दुनिया ने माना कि चेकोस्लोवाकिया ने जो सवाल उठाये हैं उनके उत्तर का सम्बन्ध सभ्यता के विकास से तो है ही, मनुष्य के अस्तित्व से भी है। इसीलिए इतने महीनों बाद रह-रहकर मन में यह सवाल उठता है कि आज वह चेकोस्लोवाकिया कहाँ है ?

क्या कारण है कि शहादत और समर्पण की जिस सीमा तक विएतनाम जा सका, या अफ्रीका के कई देश जा सके वहाँ तक चेकोस्लोवाकिया नहीं जा सका ? क्यों वह रूस की सारी जबरदस्ती, एक के बाद दूसरी, मानता चला जा रहा है ? जिस क्रम से उसकी स्वतंत्रता खत्म होती चली जा रही है उसे देखते हुए तो ऐसा लगता है कि कुछ दिनों में चेकोस्लोवाकिया रूस का पूरा 'गुलाम' बन जायगा। क्या यह स्थिति वहाँ के नेताओं और युवकों ने कबूल कर ली है ? अगर नहीं कबूल की है तो वे कर क्या रहे हैं ? क्या वे अपने पतन को महसूस नहीं कर रहे हैं ?

आखिर, क्या कमजोरी थी जिसके कारण चेकोस्लोवाकिया अंत तक नहीं टिक सका ? क्या नेता हिम्मत हार गये ? क्या वे डर गये कि रूस ज्यादा नाराज होगा तो देश को बरबाद कर डालेगा ? क्या जनता थककर बैठ गयी ? क्या पिछले पचीस वर्षों में खायी हुई एक-के-बाद दूसरी चोटों ने जनता की हिम्मत पस्त कर दी थी ? क्या चेकोस्लोवाकिया को भय था कि अगर वह डटेगा तो बाहर का समर्थन और सहायता उसे नहीं मिलेगी ? या, ऐसा तो नहीं था कि चेकोस्लोवाकिया जहाँ तक जा सका उससे आगे जाने की उसमें आंतरिक शक्ति ही नहीं थी ? कहीं ऐसा तो नहीं है कि चेकोस्लोवाकिया के नेता, बुद्धिवादी और युवक समय देखकर जानबूझकर इस वक्त चुप बैठ गये हों ? कुछ कारण तो होगा ही जिसने आज चेकोस्लोवाकिया-जैसे देश को निराशा और अपमान का जीवन बिताने को विवश किया है।

जो संहार-लीला विएतनाम में हुई—कौन जाने कब समाप्त होगी ? उसका कोई अंश चेकोस्लोवाकिया में नहीं हुआ, लेकिन विएतनाम ने कभी कदम पीछे नहीं हटाया। फिर चेकोस्लोवाकिया को क्या हो गया ? प्रतिकार हिंसा से हो या अहिंसा से, वीरता को छोड़कर प्रतिकार की कल्पना भी नहीं की जा सकती। उत्सर्ग की आवश्यकता हिंसा में जितनी होती है उससे कम अहिंसा में नहीं होती; बल्कि ज्यादा होती है। लगता है कि चेकोस्लोवाकिया में हिंसा या अहिंसा किसी भी रास्ते पर अन्त तक जाने की तैयारी नहीं थी। हाँ, आजादी की एक भावना थी जो चुनौती पाकर उभड़ी और उभड़कर रह गयी; दूर तक नहीं जा सकी। जिन्दगी के साथ खेलने, और हँसते-हँसते मौत को गले लगाने की जो वीर-भावना वीएतनाम में थी वह चेकोस्लोवाकिया में नहीं थी। मरकर जीने की कला चेकोस्लोवाकिया ने अभी शायद सीखी नहीं।

हजार विज्ञान ने विकास कर लिया हो, किन्तु मरकर जीने की कला के बिना इज्जत के साथ जीना सम्भव नहीं है। स्वाभिमानी देश चेकोस्लोवाकिया से यह सबक सीख सकते हैं। उनके सामने दूसरा कोई रास्ता नहीं है। किसी छोटे देश के लिए किसी बड़ी शक्ति के सहारे अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने का प्रयत्न करना आगे चलकर उस रक्षक शक्ति को गुलामी पहले से ही मान लेने जैसी बात है। वह बहुत महँगा सौदा है। रक्षा की कोई नयी राह निकालनी चाहिए। वह राह अहिंसा की ही हो सकती है। लेकिन अहिंसा वीरों की हो, और समाज का संगठन भी अहिंसक प्रतिकार के अनुकूल हो। जालिमों की तोपों का मुकाबिला—सफल मुकाबिला—मर-मिटने के संकल्प से किया जा सकता है। वही हमारा कवच है। उसीमें मुक्ति का आश्वासन है।

विएतनाम, चेकोस्लोवाकिया और बियाफ्रा को देख लेने के बाद दुनिया की जनता के सामने यह प्रश्न तो आ ही गया है कि वह बड़ी शक्तियों से अपने अस्तित्व को कैसे बचायेगी, सम्मान की रक्षा कैसे करेगी, और भविष्य को अपने अनुकूल कैसे बनायेगी ?

बिहार

श्री जयप्रकाश नारायण ने पटना से प्रसारित वक्तव्य में कहा है कि बिहार के राज्यपाल को ढुलमुल (अनस्टेबल) राजनीतिज्ञों की जमात को ज्यों-त्यों इकट्ठा करने की कोशिश न करके विधान-सभा तत्काल भंग कर देनी चाहिए। जयप्रकाशजी ने केन्द्रीय सरकार से भी अपील की है कि वह बिहार राज्य में ऐसे योग्य, कल्पनाशील और शक्ति-सम्पन्न व्यक्तियों के नेतृत्व में मजबूत सरकार स्थापित करने की कोशिश करे, जिन्हें लोकसभा का शक्तिशाली समर्थन और प्रधान मंत्री तथा उनके सहयोगियों का बुद्धिमत्तापूर्ण समर्थन प्राप्त हो। उन्होंने केन्द्रीय सरकार को आगाह किया कि वह राष्ट्रपति शासन की पुनरावृत्ति न करे, जिसे लोग कामचलाऊ (केयरटेकर) सरकार कहकर सम्बोधित करते हैं।

www.vinoba.in

गणनेतृत्व के नये युग में
गुणदर्शन द्वारा मैत्री का भाव विकसित करें

बंगाल के कार्यकर्ताओं के बीच आचार्य विनोबा की हार्दिक अपील

बात तो पुरानी है। बाबा ने कुछ शब्द दिये। बाबा को कुछ शब्द सूझे थे, उनमें एक शब्द था—गणसेवकत्व। दुनिया में काम तो शब्द ही करता है। कुछ शब्द होते हैं जो मनुष्य को प्रेरणा देते हैं और उनसे काम होते हैं। 'क्विट इण्डिया' (भारत छोड़ो) आन्दोलन शुरू हुआ। वह क्या था? एक शब्द चल पड़ा और सारे भारत में पैठ गया। लोगों पर उसका असर पड़ा और वह काम हो गया। यह तो मैंने सहज मिसाल दी। एक-एक युग में एक-एक शब्द मनुष्य को मिलता है और उससे मानवता प्रेरित होती है।

यह जो 'गणसेवकत्व' शब्द है, वह अर्थ-बहुल है, अर्थघन है। पुराने जमाने में एक से बढ़कर एक नेता हो गये। और भारत में उच्च कोटि के नेता हो गये। आखिरी नेता पंडित नेहरू माने जायँ और फिर वह खाता समाप्त किया जाय।...नेतृत्व का खाता समाप्त! इसके आगे महापुरुष नहीं होंगे ऐसी बात नहीं, बल्कि मैं तो ऐसी उम्मीद करता हूँ कि पुराने जमाने से भी महान पुरुष हो सकते हैं। पुराने जमाने में जो महान पुरुष हो गये, उनसे भी बढ़कर आगे होंगे और उत्तरोत्तर श्रेष्ठ पुरुष निर्माण होंगे। यह बात हमने अपनी एक किताब—'स्थितप्रज्ञ दर्शन'—में लिख रखी है कि इस जमाने के स्थितप्रज्ञ पुराने जमाने के स्थितप्रज्ञ से आगे होंगे। यह तो अपेक्षा है ही। लेकिन आगे जो महापुरुष होंगे वे अनेक में से एक होकर रहेंगे। यह खूबी है। उनका अनेकों में से एक होना खूबी है।

हमको एक कविता याद आती है। 'वर्ड्सवर्थ' अंग्रेजी के एक महान कवि थे। उनकी एक छोटी-सी कविता है। उसमें उन्होंने व्यक्त किया है कि मेरा स्मारक कैसे बनाया जाय। तो लिखा है कि अमुक जगह मैं रोज जाता था एक टीले पर, और वहाँ अनेक पत्थर पड़े हैं। उनमें से बहुत-से अच्छे-अच्छे पत्थर खोजकर लोग ले गये और उन पर कारीगरी की। मैंने देखा कि एक पत्थर जो कारीगरी के लिए उपयोगी नहीं था वहाँ पड़ा हुआ है जिधर किसीका ध्यान नहीं गया। वह मेरे स्मारक के लिए चुना जाय और उस पर लिखा जाय कि 'वन आफ मेनी'—बहुतों में से एक। यह आकांक्षा थी वर्ड्सवर्थ की। वर्ड्सवर्थ कोई छोटा मनुष्य तो था नहीं, लेकिन यह पसन्द नहीं किया कि स्मारक पर अपना नाम हो। बहुतों में से एक रहना, इसमें ही आनन्द है।

दूसरी मिसाल अब्राहम लिंकन की कहानी है। वे अमरीका के एक सफल नेता थे। एक बार उनका बहुत बड़ा जुलूस निकाला गया था। उसे देखने के लिए बहुत से लोग इकट्ठा हुए थे। उनमें कुछ मामूली लोग भी शामिल थे। उनमें से दो लोग आपस में बातें कर रहे थे। एक ने कहा कि, 'हमने समझा था कि लिंकन बहुत बड़ा कोई विशेष मनुष्य होगा, लेकिन वह तो मामूली मनुष्य-जैसा ही लगता है!' लिंकन ने यह बात सुनी और कहा कि, 'देखो बेटा, भगवान ने ऐसे लोगों की 'मेजारिटी' (बहुसंख्या) पैदा की है। इसलिए सामान्य मनुष्य भगवान को कितने प्यारे हैं, उसका अन्दाज लगता है।' सार यह है कि आगे जो नेता आयेंगे वे एक-से-एक बढ़कर होंगे, लेकिन इसीमें उनकी विशेषता समझूँगा कि वे अपने को अनेकों में से एक समझें।

यह बात वेद में भी पायी जाती है। वेद दीर्घदर्शी पुस्तक है। वह निःसंशय भारत की पहली किताब है। लेकिन कुछ लोगों की राय है कि वह दुनिया की पहली किताब है। उसमें आर्ष ऋषि हैं और आगे के जमाने के लिए भी काफी अन्दाज किया गया है: 'पंचजनान् अनुजनान् यतते पंचधीराः'—जो बुद्धिमान मनुष्य होता है, वह पाँच जन जो कहते हैं, तदनुसार प्रयत्न करता है। है तो धीर, बुद्धिमान, लेकिन पाँच लोग जो एक राय से बताते हैं उसके अनुसार काम करता है। उसका नाम है ऋषि। लोकतंत्र-वालों की जो राय है वह यही है। उसीके अनुसार वे राज बनाना चाहते हैं, न कि किसी एक विद्वान के अनुसार। स्वराज्य का अर्थ सामान्य जनता की बुद्धि जो चाहती है उसके अनुसार राज्य।

यह कहानी इसलिए कही कि हम लोग नेतृत्व की आशा रखनेवाले लोगों में से एक हैं। मैं कहता हूँ कि वे दिन अब खतम हुए हैं। हम और आप अब कन्धे-से-कन्धा मिलाकर, भाई-भाई के नाते मित्र-मित्र के नाते, बल्कि 'भाई' शब्द भी वेद को अच्छा नहीं लगा, उसने कहा—"अज्येष्ठासो अकनिष्ठासः"—ज्येष्ठ-कनिष्ठ यह फर्क भाई-भाई में रहता है, इसलिए मित्र बनें, जिनमें कोई ज्येष्ठ नहीं और कोई कनिष्ठ नहीं, काम करें।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि आमलोगों का आपस-आपस में प्रेम होना चाहिए, स्नेह होना चाहिए। यह मामला जरा मुश्किल है, खास करके बंगाल के लोगों के लिए। कारण यहाँ सत्यनिष्ठा अधिक है। हर किसीके पास सत्य है और उसको वह छोड़ना नहीं चाहता। सामनेवाले के पास भी सत्य होगा, ऐसी गुंजाइश नहीं रखी। यह समझना चाहिए कि हमारे पास सत्य का एक पहलू होता है और सामनेवाले के पास भी सत्य का एक पहलू होता है, तो हमारे ही पास सत्य है यह समझना गलत है। और हर एक के पास से सत्य का अंश ग्रहण करने की कोशिश करनी चाहिए। हर एक पास जो गुण है, उसे लेने की कोशिश करनी चाहिए। गुण-दोष तो हर एक के पास होते हैं। मैंने एक रूपक बनाया है। मनुष्य-जीवन एक मकान है। मकान में दरवाजे होते हैं और दीवारें होती हैं। दरवाजे गुण हैं और दीवारें दोष हैं। कितना भी गरीब मनुष्य हो उसके घर में कम-से-कम एक दरवाजा तो रहेगा ही। आपको अगर घर में प्रवेश करना हो तो आप दरवाजे से ही प्रवेश कर सकते हैं। दीवार से प्रवेश→

सर्वोदय : अतिवादी अहिंसक वामपंथ

www.vinoba.in

पिछले वर्ष पश्चिम बंगाल की संयुक्त मोर्चे की सरकार को बड़े अनियमित तरीके से बर्खास्त कर दिया गया था, फिर भी बहुत-से भले विचारवाले लोगों ने उसका स्वागत किया था, क्योंकि उन्होंने सोचा, यह कदम उठाकर बंगाल के राज्यपाल यानी केन्द्रीय सरकार ने, वामपंथी साम्यवादियों द्वारा नियोजित एक खतरनाक और हिंसक विद्रोह से बंगाल का बचाव किया था। केरल में जब सन् १९५७ में पहली कम्युनिस्ट सरकार गठित हुई थी तो वह सन् १९५८ में जिस दाँव-पेंच से उलट दी गयी थी वह भी कम नागवार नहीं था। उस समय भी बहुत-से लोगों ने राहत की साँस ली थी।

इस बात में कोई सन्देह नहीं है कि वामपंथी कम्युनिस्टों का हिंसक उपायों में विश्वास है और वे यदि हिंसक उपायों से क्रान्ति कर सकें तो इसकी उन्हें बड़ी खुशी होगी। यह भी सच है कि हम लोकतंत्र को जिस रूप में समझते हैं, उससे कम्युनिस्टों की धारणा का लोकतंत्र भिन्न वस्तु है और कम्युनिस्ट सरकारों ने अपने विरोधियों को बड़ी बेरहमी से दबाया है। लेकिन हमें इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए कि सिर्फ कम्युनिस्ट ही ऐसे लोग हैं, जो एक खासे अच्छे और शान्तिपूर्ण समाज-व्यवस्था में हिंसा का प्रवेश कराना चाहते हैं।

जब बंगाल में बढ़ती हुई बेचैनी और अव्यवस्था की लहरों के बारे में चर्चा करते हुए लोग मेरे सामने अपने मन का खेद प्रकट करते हैं और बंगाल की दूसरे राज्यों में मौजूद सुव्यवस्था से तुलना करते हैं तो मेरे दिमाग के सामने कालाहांडी और सरगुजा का चित्र उभर जाता है।

दो चित्र : आँख खोलनेवाले

उड़ीसा तथा मध्यप्रदेश के इन दो जिलों में पिछले वर्षों के भयानक सूखे में सैकड़ों की संख्या में युवक और बूढ़े लोग भूख के कारण मौत के शिकार बन गये! सूखे का कारण प्राकृतिक प्रकोप था, लेकिन लोगों की मौतें प्राकृतिक प्रकोप के कारण नहीं हुईं। एक अत्यंत शोषण-प्रधान समाज-व्यवस्था ने सामान्य लोगों की जिन्दगी में से जीवन-निर्वाह के साधनों की आखिरी बूंद तक निचोड़ लिया था और इसके नतीजे से लोगों में विपरीत परिस्थिति का सामना करने की थोड़ी-सी भी क्षमता नहीं बची थी। जिस समय लोग भूखों मर रहे थे, उस समय भी शोषण की यह प्रक्रिया जारी थी। व्यापारी और सूद पर रुपया देनेवाले कर्जदाता ऐसे लोगों की जमीन-जायदाद, पशु, गहने और

मनमोहन चौधरी

गृहस्थी के बर्तन लोभ के साथ हथियाते जा रहे थे। सूखे से पीड़ित लोगों के लिए दूसरी जगहों से जो खाद्य-सामग्री और अन्य सामान आया था वह उन्हें मिलने के बदले काला बाजार में पहुँच रहा था! देश की आर्थिक व्यवस्था ने ऐसे लोगों के हाथ से उन रोजगार के साधनों को छीन लिया था, जिनसे उन्हें खेती से बचे हुए समय में कुछ कमाई हो जाती थी। पिछले २० वर्षों के दौरान देश की अर्थ-व्यवस्था ने ऐसे लोगों को रोजगार के साधन उपलब्ध कराने के लिए कुछ नहीं किया। भूमि-सुधार के कामों और सिंचाई की सुविधाओं की बुरी तरह उपेक्षा की गयी और इन्हीं कारणों से लोग भूखों मरे।

ऐसी बात सिर्फ दो ही जिलों में हुई हो ऐसा नहीं है। देश के अनेक क्षेत्रों में ऐसा ही हुआ। ऐसे इलाकों में भी जहाँ आर्थिक उन्नति होने के बाहरी लक्षण दिखाई देते हैं, आम लोग पूंजीवादी शोषण के चंगुल में जकड़े हुए दिखाई देते हैं। आज करोड़ों की तादाद में ऐसे लोग हैं, जो जैसे-तैसे किसी तरह अपना गुजाराभर कर सकने के लिए मजबूर हैं।

असह्य परिस्थिति कौनसी?

इतना सब सोचने के बाद मैं अपने आपसे पूछता हूँ—"कौनसी परिस्थिति ज्यादा असत्य है, वह जिसमें लोग इतने मासूम और बेसहारा बना दिये गये हैं कि वे प्रतिवाद का एक शब्द कहे बिना चुपचाप मर जाते हैं या कि वह परिस्थिति जिसमें वे लोग जाग चुके हैं और गिड़गिड़ाकर मजबूरी से कोई परिस्थिति कबूल करने के लिए तैयार नहीं हैं?"

जाहिर है कि हम एक ऐसी समाज-व्यवस्था में जी रहे हैं, जिसे टूटना ही चाहिए और जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी टूटना चाहिए। अगर सर्वोदय-आन्दोलन यह नहीं करना चाहता तो वह कुछ नहीं-के बराबर है। सर्वोदय-आन्दोलन हिंसा का परित्याग करना चाहता है, इसलिए नहीं कि हिंसा एक अच्छे और वांछनीय समाज की सुचारु रूप से चलनेवाली व्यवस्था के साथ छेड़छाड़ करती है, बल्कि इसलिए कि वह उस हिंसा का उन्मूलन करना चाहता है, जो आज की सड़ी-गली समाज-व्यवस्था का मूल आधार बनी हुई है और यह काम सिर्फ अहिंसक तरीके से ही हो सकता है। सर्वोदय-आन्दोलन लोकप्रिय हिंसा की इसलिए निन्दा करता है कि उससे आम लोगों की तकलीफ बढ़ती है।

हमारा मतभेद हिंसक साधनों से, साध्य से नहीं

इस बारे में हमारा दिमाग बहुत साफ रहना चाहिए कि हम वामपंथी दलों के अपनाये गये तरीकों के विरोधी तो हैं, लेकिन हमारा उन निहित स्वार्थवाले उन लोगों के

→नहीं कर सकते, सिर फूट सकता है। अगर आप मनुष्य के हृदय में प्रवेश करना चाहते हैं तो उसके गुण के द्वारा ही कर सकते हैं। दोषों की ओर देखेंगे तो सिर टूटेगा। इसलिए गुण-ग्रहण की दृष्टि बढ़नी चाहिए और निरन्तर गुणगान करना चाहिए। यह मैत्री के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

मैं पसन्द करता हूँ 'गणसेवकत्व' शब्द। हम सारे सेवक हैं और हम सारे गुण-दोष से भरे हुए हैं, लेकिन हम लोगों में एक सूत्र है। एक स्नेह-सूत्र पिरोया हुआ है, ऐसा होना चाहिए। दिमाग अनेक हों तो, हर्ज नहीं, लेकिन एक दिल हो जाय, यह हमारे आंदोलन के लिए जरूरी है।

पुरुलिया : बंगाल (बंगाल के
१०-६-'६९ कार्यकर्ताओं के बीच)

साथ कोई मेल नहीं है, जो मौजूदा समाज की उस हिंसा के पक्षधर हैं, जिसने अपने नाग-फाँस में सबको जकड़ रखा है और, उसे दबाने के लिए वे सब कुछ करने को तैयार रहते हैं, जो इसे चुनौती देता है। अगर हम अपने विश्वास को गम्भीरतापूर्वक आजमाना चाहते हैं और यह भरोसा रखते हैं कि अहिंसक उपायों द्वारा हम निहित स्वार्थवालों के रुख और व्यवहार में परिवर्तन ला सकते हैं तो हमें इस बात का और पक्का भरोसा होना चाहिए कि हम वामपंथियों पर प्रभाव डालने में सफल होंगे, क्योंकि गरीब और शोषितों के प्रति करुणा की भावना रखने के कारण वे हमारे और नजदीक हैं।

इसीलिए पश्चिम बंगाल में लोकमत के वामपंथ की ओर झुकने को हमें एक स्वागत-योग्य धाराप्रवाह मानना चाहिए। इससे यह जाहिर होता है कि बंगाल में जातिगत और साम्प्रदायिक राजनीति की शक्ति घटी है और आज की वास्तविक तथा ज्वलंत समस्याओं के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ी है। इस जागरूकता के साथ जो बेचैनी और अव्यवस्था आयी उसकी परीक्षा सिर्फ त्रिविध कार्यक्रम के जोरदार प्रचार-प्रसार से ही हो सकती है। यह काम कब्र जैसी शान्ति की पुनर्स्थापना से नहीं होगा, बल्कि त्रिविध कार्यक्रम—जैसे मौलिक, गतिशील और व्यावहारिक कार्यक्रम द्वारा बुराइयों का मुकाबिला करने से होगा। वामपंथियों में जो सबसे ज्यादा वामपंथी हैं उनसे भी सर्वोदय कुछ अधिक वामपंथी है और हमें अपनी इस योग्यता में भरोसा होना चाहिए कि हम वामपंथियों को यह विश्वास दिला सकेंगे कि उन्हें अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक कदम और पीछे नहीं, बल्कि आगे बढ़ना है। फिर हमें उन घटनाओं का भी ध्यान रखना चाहिए जो साम्यवादियों की दुनिया का चेहरा बदल रही हैं। साम्यवाद अब प्रस्तरयुगीन आन्दोलन नहीं है। आज दुनिया में उतने प्रकार के साम्यवाद हैं, जितने कि दुनिया के देश हैं। साम्यवादियों की एक सबल आकांक्षा व्यक्ति को और अधिक आजादी देने की रही है। हम सबने आश्चर्य और प्रशंसा की भावना के साथ यह देखा कि कितने वीरतापूर्ण और शान्तिमय प्रतिकार द्वारा चेक-जनता ने पाँच साम्यवादी शक्तियों के आक्रमण का सामना किया।

भारत में साम्यवाद : दिशा किस ओर ?

भारत में तीन साम्यवादी दल हैं। यद्यपि तीनों साम्यवादी दल समाज-परिवर्तन के लिए हिंसा के औचित्य को मानते हैं, किन्तु वे तात्कालिक कार्यक्रम के सम्बन्ध में मतभेद रखते हैं। दो साम्यवादी दलों ने नक्सालवादियों के अतिवाद से आमतौर पर असहमति जाहिर की है। इससे इतना तो कहा ही जा सकता है कि उन्होंने छिटपुट हिंसा की निरर्थकता का अनुभव कर लिया है। यह उनके दृष्टिकोण के एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का सूचक है। प्रशासन के काम में हाथ बँटाने पर उन्हें देश की समस्याओं का और नजदीक से परिचय प्राप्त होगा। फिर इसके नतीजे से उनका दृष्टिकोण और अधिक वास्तविकतावादी होगा।

जिन-जिन प्रदेशों में वामपंथी दल →

लोकशक्ति जगेगी तभी क्रान्ति होगी

मैं थोड़े दिन पटना जिले में बैठा रहा, किया कुछ नहीं। थोड़ा विचार समझता था। अब वह जिलादान में आ गया है। पटना जिले का दान यह छोटी बात नहीं है। आजकल 'जमीन' शब्द से लोगों पर इतना असर नहीं होता जितना 'पैसा' सुनकर होता है। जमीन अपनी माता है, वह हमें खिलाती है। नोटें तो छपती हैं। १० लाख रुपयों की नोटें गढ़े में डालेंगे तो कितनी फसल आयेगी? क्या नतीजा होगा? कुछ नहीं! लेकिन जमीन से अनाज उत्पन्न होता है, इसलिए जमीन की कीमत पैसे में नहीं होती है। पटना जिले की जमीन १० हजार रुपये एकड़वाली है। और कम-से-कम कहें, तो भी ५ हजार रुपये एकड़ से कम नहीं है। मतलब, १० करोड़ रुपयों की २० हजार एकड़ जमीन पटना जिले में बँटेगी। यह छोटी घटना नहीं है। जन-शक्ति जो कर सकती है, वह सरकार की शक्ति नहीं कर सकती। बिहार में देखा, यहाँ कांग्रेस का राज्य था। दूसरा भी राज्य था। हमने जे० पी० से कहा था कि आपके मित्र सरकार में हैं, उनसे दरयाफ्त कीजिए कि सरकार की तरफ से कितनी जमीन बँट सकती है। तो उनको जवाब मिला कि ७-८ हजार एकड़ जमीन बँट सकती थी, लेकिन बँटी नहीं। उसी बिहार में साढ़े तीन लाख एकड़ जमीन भूदान से बँटी है। लोक-शक्ति अगर जग जायेगी तो क्रांति हो सकती है, लोक-मानस में परिवर्तन हो सकता है। सरकार के तरीके से लोक-मानस में परिवर्तन नहीं हो सकता। अपना यह देश खेतीप्रधान है, उद्योग कम है। ऐसे देश में खेती की उपज कम हो तो जगह-जगह अकाल पड़ेगा और यहाँ अकाल पड़ा भी है। अभी भी दुनिया के दूसरे देशों से अनाज मँगवाना पड़ रहा है। बाहर से लाखों टन अनाज आ रहा है। वादे किये जाते हैं कि अब नहीं मँगवाना होगा, लेकिन वैसा अभी तक नहीं हो पाया। इसलिए मजदूर, जमीन के मालिक और महाजन, ये तीनों 'म' इकट्ठा हो जायेंगे तो खेती की उपज बढ़ सकती है। तिपाई तीन पाँव पर खड़ी होती है। वैसे ही ये तीन 'म' इकट्ठा हो जायँ ऐसा प्रयत्न ग्रामदान के द्वारा हो रहा है।

सारे भारत में १२ लाख एकड़ से अधिक जमीन बँटी। सरकार से बहुत हुआ तो पाँच-पचास हजार एकड़ जमीन बँटेगी। इससे आपके ध्यान में आयेगा कि हमें नीचे से काम करना होगा। जन-शक्ति विकसित करनी होगी तभी हमारे देश का भला है।

रांची : १२-६-'६९ —विनोबा

www.vinoba.in

आर्थिक सत्ता : नियंत्रण किसका ?

[गत २८ अप्रैल '६९ के 'भूदान-यज्ञ' में चिन्तन-प्रवाह के अन्तर्गत श्री सिद्धराज ढड्ढा ने यह मत व्यक्त किया था कि आर्थिक सत्ता के केन्द्रीकरण के खिलाफ उठनेवाली आवाजों का हार्दिक स्वागत करते हुए भी हम पूँजीपतियों द्वारा नियंत्रित केन्द्रित आर्थिक सत्ता के विकल्प के रूप में राज्यनियंत्रित आर्थिक सत्ता को स्वीकार नहीं कर सकते। क्योंकि तब राजनीतिक और आर्थिक, दोनों प्रकार की सत्ताओं का नियंत्रण राज्य के हाथ में होने से केन्द्रीकरण और अधिक होगा, और उसके परिणाम और भी अधिक जनता के लिए आपदायी होंगे। इस अभिव्यक्ति पर श्री सुरेश राम भाई ने अपनी प्रतिक्रिया जाहिर करते हुए 'भूदान-यज्ञ' के ९ जून के अंक में लिखा कि 'राष्ट्रीयकरण' में भी शोषण की प्रक्रिया जारी रहती है, लेकिन व्यक्तिगत पूँजीवाद से तो राष्ट्रीयकरण लाख दर्जे बेहतर है। लीजिए, इस विषय पर प्रस्तुत हैं कुछ और अभिव्यक्तियाँ। — सं०]

मर्ज से भी ज्यादा घातक इलाज

आर्थिक सत्ता के केन्द्रीकरण के विषय में श्री सुरेश राम भाई का जो लेख 'भूदान-यज्ञ' के ९ जून '६९ के अंक में प्रकाशित हुआ है वह मैंने पढ़ा। मेरा आशय तो उन्होंने ठीक ही समझा है। मूल बात के बारे में कोई मत-भेद नहीं है। लेकिन मैं तो केन्द्रीकरण मात्र का विरोधी हूँ, राज्य के हाथों में सत्ता के केन्द्रीकरण को और भी ज्यादा भयानक मानता हूँ। पूँजीवादी केन्द्रीकरण को रोकने के के लिए भी राज्य-सत्ता का आश्रय लेना मुझे तो 'गिविंग अप दी फाइट' जैसा लगता है। इतना ही नहीं, इलाज मर्ज से भी ज्यादा घातक साबित हो सकता है। फिर भी पूँजीवाद का विरोध जाहिर करने की जिस भावना से श्री सुरेश राम भाई ने राज्य-सत्ता की बुराई को स्वीकार करने की बात लिखी है, उस भावना से मैं सहमत हूँ - सिद्धराज ढड्ढा

राष्ट्रीयकरण या विकेन्द्रीकरण ?

अपने देश में जिस रीति-नीति से पिछले २० वर्षों में औद्योगिक विकास किया गया है, उससे यह तो स्पष्ट ही है कि बड़े-बड़े उद्योगों को काफी प्रोत्साहन मिला, जिनमें से कुछ 'प्राइवेट सेक्टर' में चल रहे हैं और कुछ 'पब्लिक सेक्टर' में। परन्तु दोनों ही क्षेत्र के उद्योगों की एक-सी स्थिति है। दोनों ही विदेशी मार्गदर्शन व सहायता पर आधारित हैं। दोनों में ही मजदूर-वर्ग असंतुष्ट है। उत्पादन में जनहित के दृष्टिकोण का दोनों ही जगह अभाव है। मुनाफे की वृत्ति दोनों ही जगह मौजूद है तथा दोनों ही क्षेत्र में शोषण भी जारी है। इसके अलावा दोनों ही क्षेत्रों के बड़े उद्योगों ने गृहउद्योगों, ग्रामोद्योगों और लघुउद्योगों को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है, इसलिए आज सरकार की सहायता और संरक्षण के बावजूद ये छोटे-छोटे उद्योग आगे बढ़ ही नहीं पा रहे हैं। (यद्यपि इनको सरकार की ओर से जितना संरक्षण और जितनी सहायता मिलनी चाहिए उतनी मिल नहीं रही है, उसमें भी बड़े उद्योग व उद्योगपतियों का ही हाथ है, जो सरकार की औद्योगिक नीति को प्रभावित किये हुए है।)

सरकार की आज तक की औद्योगिक नीति से इस देश में ग्रामीण उद्योग तो नष्ट-प्राय हो गये हैं। उन्हें न तकनीकी मार्गदर्शन दिया गया, न उसे यंत्र और न माकूल ऋण व शिक्षा दी गयी। इसलिए देश में जिस ढंग से उद्योगों का वैज्ञानिक विकास होना चाहिए था वह नहीं हो पाया। जिस प्रकार गृहउद्योग से बड़े उद्योग तक समन्वय होना चाहिए था वह नहीं हुआ और न मानवीय पहलू का भी औद्योगिक विकास में कोई ध्यान रखा गया। नतीजा यह हुआ कि बड़ी-बड़ी मशीनों के आगे मानव आज खोता जा रहा है। उसकी संस्कृति व कला का ह्रास होता जा रहा है। इस देश की अपार मानव व पशु-शक्ति बेकार हो चुकी है और होती जा रही है।

देश की मौजूदा स्थिति को देखते हुए यह सभी के लिए विचारणीय विषय है कि क्या आज बड़े-बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण उचित होगा ? अगर उचित मान भी लें तो क्या आज की सरकार के लिए सम्भव होगा ? और अगर उचित नहीं है तो फिर आज दूसरा क्या विकल्प है ?

जहाँ तक उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का प्रश्न है, मेरे खयाल से यह अनुचित ही नहीं, बल्कि राष्ट्र के लिए घातक भी होगा। आज समाज शोषण से इतना पीड़ित नहीं, जितना शासन से। इस शासन के सहारे ही तो आज बड़े-बड़े उद्योग खड़े हुए हैं, और इनके सहयोग व समर्थन से ही शोषण कर रहे हैं। आज 'पब्लिक सेक्टर' के उद्योगों में सरकार सबसे बड़ी शोषक है। ऐसी सूरत में जितने उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जायगा उतना ही

— सत्ताच्युत हुए हैं, वहाँ उन्हें एकसाथ दुहरी समस्याएँ सुलझानी पड़ रही हैं। एक प्रकार से उन्हें राज्यशक्ति और जनसमूह द्वारा होनेवाली सीधी कार्रवाई की एकसाथ बागडोर सम्भालनी पड़ रही है।

वामपंथी दलों ने 'घेराव' तथा दबाव डालनेवाले अन्य उपायों को जिस हद तक बढ़ावा दिया उससे शुरू में तो उन्हें कुछ तात्कालिक सफलता मिलती दिखाई दी, लेकिन बाद में वे एक अंधेरे रास्ते पर पहुँच गये। यदि उन्होंने अहिंसा को गम्भीरता से अपनाया और उसकी संभावनाओं की छानबीन की तो वे पायेंगे कि अहिंसा पूरी तरह उनके लिए लाभदायक है। यदि अहिंसा में विश्वास करनेवाले लोग इसकी क्षमता को प्रदर्शित कर पायें तो इसका बहुत अच्छा परिणाम सामने आयेगा। जिन क्षेत्रों में ग्रामदान-आन्दोलन जोर-शोर से चल रहा है वहाँ के लगभग सभी वामपंथी दल, जिनमें साम्यवादी भी हैं, इसमें भाग ले रहे हैं। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि ग्रामदान आन्दोलन की सफलता उग्रपंथियों के हिंसा के विश्वास को बहुत दूर तक कम करेगी।

(मूल अंग्रेजी)

www.vinoba.in

शासन के हाथ में शोषण केन्द्रित होता चला जायगा। इसके अलावा आज उद्योग के मालिक को उत्पादन में जो दिलचस्पी है वह सरकारी मैनेजर में कभी नहीं हो सकती। इसे हम सरकारी उद्योगों में देख ही रहे हैं कि वे सभी घाटे में जा रहे हैं! राष्ट्रीयकरण से मैनेजरवाद व नौकरशाही बढ़ेगी और जन-अभिक्रम घटेगा, पूँजी का अभाव होगा। और सबसे खतरनाक बात यह होगी कि जिस शासन से समाज को मुक्त करना है, उसी शासन के हाथ हम राष्ट्रीयकरण से और मजबूत कर देंगे, केन्द्रित सत्ता के ही हाथ में पूंजी को भी केन्द्रित कर देंगे, इससे बड़ी और भयंकर भूल क्या होगी?

अगर थोड़ी देर के लिए यह मान भी लें, कि बड़े-बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण उचित है तो भी आज की सरकार इस दिशा में कदम उठा नहीं सकेगी, क्योंकि लोकसभा में बहुमत इसके पक्ष में नहीं है। अगर होता तो अभी तक कर भी चुके होते। इसके अलावा जो उद्योग इस समय सरकार के हाथ में हैं, उन्हें भी सरकार भली प्रकार चला नहीं पा रही है। साथ ही आज की सरकार पर उद्योगपतियों का जो प्रभाव है उसको देखते हुए सरकार के लिए यह कदम उठाना सम्भव ही नहीं दिखता। इसका कारण और भी है कि सरकार के पास ऐसी सक्षम मशीनरी नहीं है, जो राष्ट्रीयकरण के बाद देश के सभी बड़े उद्योगों को सुचारु रूप से चला सके, न आम जनता व राजनैतिक दलों की ओर से राष्ट्रव्यापी ऐसी कोई आवाज ही है, जिसके दबाव से सरकार को ऐसा कदम उठाना पड़े।

तब प्रश्न यह रहता है कि फिर इसके लिए विकल्प क्या है? इसके लिए सही विकल्प वही हो सकता है, जिससे इस देश को भयंकर अर्द्धबेकारी व बेकारी से मुक्त किया जा सके, वैज्ञानिक ढंग से औद्योगिक विकास भी हो सके, तथा पब्लिक और प्राइवेट सेक्टर के विवाद के साथ ही शोषण भी समाप्त हो सके। इसके लिए एकमात्र उपाय है केन्द्रित उद्योगों का जल्दी-से-जल्दी विकेन्द्रीकरण करके उनका वैज्ञानिक ढंग से विकास करना। विकेन्द्रीकरण का अर्थ बड़े उद्योगों का लघु उद्योगों में टुकड़ीकरण हर्गिज नहीं है—जैसा कि कुछ हद तक आज सोचा जा रहा है। बल्कि हर बड़े उद्योग की जितनी प्रक्रियाएँ छोटे-से-छोटे यूनिट के रूप में हो सकती हैं, उतनी उस स्तर पर चलायी जायँ। उदाहरणार्थ, वस्त्र-उद्योग में कताई अगर किसान के घर में हो सकती हो तो पूर्णतया वैज्ञानिक ढंग से कताई-कार्य गृह-उद्योग के रूप में चले और केन्द्रित कताई-कार्य समाप्त किया जाय। जहाँ तक बुनाई का प्रश्न है, यह कार्य कलाई से सीमित कार्य है, परन्तु गाँव-गाँव में बुनकरों को काम देने हेतु बुनाई-कार्य भी जहाँ तक सम्भव हो, ग्रामोद्योग के रूप में पूर्णतया वैज्ञानिक ढंग से चलाया जाय। कार्डिंग गृह-उद्योग व ग्रामोद्योग के रूप में नहीं चल सकता, इसलिए यह कार्य कई गाँवों के बीच प्रखण्ड-स्तर पर हो और 'फिनिशिंग' कार्य जिला-स्तर पर हो। वस्त्र-उद्योग में जिस-जिस किस्म की विशेष कताई व बुनाई आदि के कार्य गृह, ग्राम, प्रखण्ड व जिला-स्तर पर न हो सकें, उतने से काम के लिए यह उद्योग प्रान्त या राष्ट्रीय स्तर पर बड़े उद्योग के रूप में तब-तक चले, जबतक उसका भी विकेन्द्रीकरण सम्भव न हो जाय। इस प्रकार सभी बड़े उद्योगों का विकेन्द्रीकरण सम्भव है। इसके लिए त्रिविध प्रयत्न करने होंगे। नीचे के स्तर पर समाज के सहयोग से गृह-उद्योग, ग्रामोद्योग व लघु-उद्योगों का विकास करना होगा, दूसरी तरफ सरकार को इस दिशा में सक्रिय रूप से शीघ्र आगे बढ़ाने हेतु ग्राम-स्वराज्य के रूप में शासन को शीघ्र विकेन्द्रीकरण करना होगा; तीसरी तरफ बड़े-बड़े उद्योगपतियों को ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त पर अपने बचे हुए उद्योग को चलाने के लिए तैयार करना होगा।

इस प्रकार तिहरा कदम उठाने से देश की भयंकर बेकारी व अर्द्धबेकारी ही नहीं दूर होगी, बल्कि 'प्राइवेट' और 'पब्लिक सेक्टर' का भेद तथा औद्योगिक क्षेत्र में शोषण भी पूर्णतः समाप्त हो जायेगा। तब, राष्ट्रीयकरण की जगह विकेन्द्रीकरण (विकेन्द्रित समाजीकरण) हो जायेगा, जहाँ श्रम, साधन व उपभोक्ता, तीनों मौजूद हैं। वहाँ उनकी रुचि, कला व संस्कृति के अनुसार मानवीय दृष्टि से जीवनोपयोगी उत्पादन उपयोग के लिए होगा। —बद्रीप्रसाद स्वामी

व्यक्तिगत् स्वामित्व की हिंसा, राज्य की हिंसा से कम हानिकारक

मैं राज्य की सत्ता की वृद्धि को बड़े-से-बड़े भय की दृष्टि से देखता हूँ, क्योंकि जाहिरा तौर पर तो वह शोषण को कम-से-कम करके लाभ पहुँचाती है, परन्तु व्यक्तित्व को जो सब प्रकार की उन्नति की जड़ है—नष्ट करके वह मानव जाति को बड़ी-से-बड़ी हानि पहुँचाती है।

राज्य केन्द्रित और संगठित रूप में हिंसा का प्रतीक है। व्यक्ति के आत्मा होती है, परन्तु चूँकि राज्य एक आत्मा-रहित जड़ मशीन होता है, इसलिए उससे हिंसा कभी नहीं छुड़वायी जा सकती, उसका अस्तित्व ही हिंसा पर निर्भर है।

मेरा यह पक्का विश्वास है कि अगर राज्य हिंसा से पूँजीवाद को दबा देगा, तो वह स्वयं हिंसा की लपेट में फँस जायगा और किसी भी समय अहिंसा का विकास नहीं कर सकेगा।

मैं स्वयं तो यह अधिक पसंद करूँगा कि राज्य के हाथों में सत्ता केन्द्रित न करके ट्रस्टीशिप की भावना का विस्तार किया जाय। क्योंकि मेरी राय में व्यक्तिगत स्वामित्व को हिंसा राज्य की हिंसा से कम हानिकारक है। किन्तु अगर यह अनिवार्य हो तो मैं कम-से-कम राजकीय स्वामित्व का समर्थन करूँगा।

मुझे जो बात नापसंद है वह बल के आधार पर बना हुआ संगठन, और राज्य ऐसा ही संगठन है। स्वेच्छापूर्वक संगठन जरूर होना चाहिए।

('दी मॉडर्न रिव्यू': सन् १९३५, अंक–४१२)

नगर-आन्दोलन शुरू हो

दिनांक ९ जून के ३६ वें अंक में गत ३० वें अंक के श्री सिद्धराजजी के 'चिंतन-प्रवाह' में श्री सुरेश राम भाई का चिंतन प्रस्तुत हुआ है, उस पर पाठकों के पृथक् चिंतन की मांग की है। आशा है, इस प्रकार के विचार-मंथन से कोई दिशा भी मिल सकेगी, तथा एक-दूसरे के विचारों की जानकारी भी।

श्री सिद्धराजजी तथा श्री सुरेश राम भाई, दोनों ही अहिंसक पद्धति से आर्थिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में ही विश्वास करनेवाले हैं, और केवल विश्वास ही नहीं, अपितु इस ओर इनका अथक प्रयास भी निरन्तर जारी है। श्री सुरेश राम भाई ने सम्बधित लेख में श्री चन्द्रशेखर के राष्ट्रीय करण के औचित्य का अभिनन्दन करके अहिंसा में विश्वास करनेवालों के अन्तस्तल को झकझोरा है, ऐसा मेरा विचार है।

हम जिस क्रान्ति-विचार के सहारे जय जगत् का सपना देख रहे हैं, और उसकी संभावनाओं में विश्वास रखते हुए भी यदि इतिहास की पीछे छूट गयी मान्यता को स्वीकार कर लें तो क्रान्ति-विचार ही कुंठित होगा, और जन-अभिक्रम के लिए कोई अवकाश नहीं रहेगा।

इसके अतिरिक्त आज तक के परिणाम-स्वरूप प्रशासन के माध्यम से जो भी विकास आदि के नाम पर व्यय हुआ है, उसमें न्यायिक वितरण की बात किसीने भी स्वीकार की है क्या? रूस या चीन में जैसा भी कुछ हुआ हो, वह बात पृथक् है, किन्तु भारत की स्थिति में तो यह संदेहास्पद है।

आज देश क्रान्ति के कगार पर खड़ा है। और जितना शोषण-उत्पीड़न है, वह उसमें गति ला रहा है। पूँजीपति वर्ग भी अपनी पूँजी की सुरक्षा की गारंटी में शासन के द्वारा पूर्ण आश्वस्त नहीं रह गया है।

क्रान्तदर्शी गांधी या विनोबा ने क्रान्ति की मर्यादा गाँव को ही माना है। सह-स्वामित्व की भूमिका पर स्थित गाँव का भारत क्या पूँजीवाद के सिंहासन को न हिला सकेगा? स्वराज्यान्दोलन की बात सभी को मालूम है, कि देशी रियासतें अंततक आन्दोलन से अछूती रहीं, किन्तु उन्हें भी बरबस देश के साथ आना पड़ा। देश की बहुल जनता के समक्ष चोटी के गिने-चुने पूँजीपति डटे रहें, यह हो नहीं सकता। आज ग्रामदान के आन्दोलन में भी यह प्रश्न पर्याप्त मात्रा में उठता है कि पहले हम ही क्यों, दूसरे इस प्रकार के लोग क्यों नहीं, तो उनका समाधान करना पड़ता है।

हमारा ध्यान तो लक्ष्य की ओर ही केन्द्रित रहना चाहिए। अर्जुन को जैसे मछली

आदिवासी नेता मेरा हृदय-परिवर्तन करें
या
मैं उनका हृदय-परिवर्तन करूँगा

यहाँ आदिवासियों के नेताओं पर हमें तरस आता है। उन्होंने यहाँ के लोगों को समझाया कि ग्रामदान में आपका नुकसान है। यह बिलकुल गलत बात है। बाबा सारा भारत देश घूमकर आया है। बाबा जनता को जितना जानता है, बाबा का जनता के साथ 'हार्ट-टु-हार्ट' जितना परिचय है, उतना किसीका भी नहीं है। उड़ीसा का कोरापुट जिला आदिवासी जिला है। वह दान में आया है। वह यहाँ से दूर नहीं है। जिन प्रांतों में ग्रामदान के लिए आकर्षण कम है, वहाँ भी आदिवासी क्षेत्र में ज्यादा ग्रामदान हो रहे हैं। क्योंकि उनके जीवन को तोड़ने का काम सरकारी कानून ने किया है। गाँव की जमीन गाँव के बाहर बेची न जाय, गाँव के लोग बाँट करके मिलजुलकर खायँ और मिलजुलकर काम करें, यह आदिवासियों का तरीका, जीवन की पद्धति अनादि काल से चली आयी है। लेकिन सरकारी कानून ने इसे तोड़ा है। इसलिए ग्रामदान से आदिवासियों को लाभ ही है। औरों को ग्रामदान से आनंद मिलेगा, लेकिन आदिवासियों को इसमें शक्ति मिलेगी और मुक्ति मिलेगी। आज उनका शोषण हो रहा है। व्यापारी जमीन छीन लेते हैं। धीरे-धीरे उनकी जमीन की मिलकियत छीनी जा रही है। जमीन ही उनकी ताकत थी। वह छीनी जा रही है। **वे आदिवासी नेता कभी मुझसे मिलने आयेंगे तो मैं अपना विचार उनके सामने रखूंगा और कहूँगा कि आप अपना विचार मुझे समझाइए और सिद्ध कर दीजिए कि इसमें आदिवासियों का नुकसान है, तो मैं आपके क्षेत्र को छोड़ दूंगा। उनको मेरी बात जँच जायेगी तो उनको इसमें आना होगा। वे मेरा हृदय-परिवर्तन करें या मैं उनका हृदय-परिवर्तन करूंगा।** ऐसे दूर-दूर रहकर बोलना और रिमार्क पास करना गलत बात है। अभी पटना के समाहर्ता ने जैसे बताया कि लंदन में १८ अप्रैल के दिन एक जुलूस निकला था। हिन्दुस्तान को राजनैतिक आजादी अहिंसा से प्राप्त हुई, यह गांधीजी ने करके बताया। अब करुणा से, अहिंसा से आर्थिक आजादी मिल सकती है यह ग्रामदान ने दिखाया, इसलिए विदेश में इस कार्य के लिए आकर्षण है। आदिवासी नेताओं को अज्ञान के अँधेरे में नहीं रहना चाहिए। अगर उनके पास टार्च है तो वे दिखायें कि उससे अँधेरा दूर होता है। किसके पास टार्च है, यह चर्चा करके सिद्ध होगा, अँधेरा उनके पास है या मेरे पास है यह देखें। केवल कल्पनामात्र से बातें करना और जो चीज सारे भारत भर में हो रही है उसके बारे में अज्ञान रखना ठीक नहीं है।

राँची : १२-६-'६९

—विनोबा

की आँख ही दीख रही थी, उसी भाँति। और जब कि हमारा आन्दोलन प्रान्तदान तक पहुँच रहा है, ऐसी स्थिति में गांधीजी के ट्रस्टीशिप के विचार को व्यवहार्य बनाने के लिए नगर-पदयात्रा के माध्यम से वरिष्ठ विचारकों को 'फैक्ट्री-दान' आदि के लिए घोषणापत्रों के सहारे अविलम्ब निकलना चाहिए। आज तक भारत के उद्योगपति या पूँजीपतियों के पास इस विचार को लेकर गाँवों की तरह पहुँचे हैं क्या? कहीं हृदय पर अविश्वास लाकर हम अपनी आत्मा को ही कुंठित न करें। इस प्रकार के कार्य के लिए गांधी-विनोबा का आशीर्वाद तो प्राप्त ही है, दूसरे, बिना इस प्रकार के आन्दोलन के देश के नगरों की जनता ग्रामदान के आन्दोलन को गाँव की उन्नति का ही कार्य समझकर उदासीन बनी रहेगी। नगरों के व्यापक आन्दोलन से जो बुद्धि और संपत्ति केन्द्रित है, उसका लाभ ग्रामीण जनता को आसानी से मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त समाचार-पत्र भी नगर-आन्दोलन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। अतः चोटी के विचारक योजनाबद्ध कार्यक्रम तैयार करके नगरों को सही दिशा प्रदान करें, जिसका शुभारंभ देश के प्रमुख उद्योगपतियों तथा पूँजीपतियों से ही किया जाना चाहिए।

—शिवनारायण शास्त्री
मथुरा

'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने का व्यापक अभियान चलायें

सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग की कार्यकर्ता साथियों से अपील

वाराणसी : सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने सर्वोदय-आन्दोलन को गतिवान्, प्राणवान् और ठोस बनाने के लिए कार्यकर्ता साथियों और मित्रों से अपील की है कि विचार-शिक्षण और उसकी स्थापना के लिए अहिंसक क्रान्ति के संदेशवाहक मुखपत्र 'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने का व्यापक और सघन अभियान चलायें। इस दृष्टि से 'भूदान-यज्ञ' के ग्राहक बनाने पर प्रति ग्राहक एक रुपया विशेष कमीशन देना तय हुआ है।

कौसानी में महिला शिविर

बा-बापू जन्म-शताब्दी में बहनें भी सक्रिय होकर कुछ काम करें, इस दृष्टि से बाल महिला समिति ने प्रखण्ड, जिला और प्रादेशिक स्तर के अनेक शिविरों के आयोजन किये हैं। हमारा यह प्रादेशिक शिविर उस शृङ्खला की सातवीं कड़ी थी।

७ दिन का यह प्रादेशिक शिविर ७ जून से कौसानी में प्रारम्भ हुआ। शिविर के प्रथम प्रभात से ही कार्यक्रम ने एक व्यवस्थित रूप ले लिया। बहनें ६ की शाम को ही पहुँच गयी थीं। उत्तरप्रदेश के १२ जिलों की ३२ प्रतिनिधि बहनें शिविर में शरीक हुईं। इनमें मुख्य रूप से शिक्षिकाएँ, छात्राएँ और समाज-सेविकाएँ थीं।

शारीरिक श्रम और बौद्धिक श्रम के बीच के भेद को मिटाने और उस अभेद का अनुभव करने के लिए शिविरार्थी बहनों ने प्रतिदिन प्रातः ६० मिनट से ९० मिनट तक हिमालय की एक ऊँची चोटी से अनासक्ति आश्रम तक पत्थर ढोने का काम किया। इसके अलावा सफाई, भोजन बनाने, परोसने, आदि के दैनिक कार्य तो हुए ही। मैदान से आयी बहनों को पहाड़ के जीवन का रंचमात्र अनुमान नहीं था। परन्तु बहुत शीघ्र बहनों ने इस जीवन के साथ समरस होने का प्रयत्न शुरू किया।

इस शिविर का उद्घाटन किया सुश्री सरला बहन ने। उन्होंने बहनों को अपनी शक्ति पहचानकर आत्मविश्वास के साथ आत्मनिर्भर जीवन जीने की प्रेरणा देते हुए कहा कि गांधी ने अमानवीय व्यवस्था के प्रति विद्रोह करने का संदेश दुनिया को दिया है, जो आज विश्व के जागरूक राष्ट्रों में उथल-पुथल के रूप में दिखाई दे रहा है। यह उथल-पुथल स्वस्थ, संतुलित व्यवस्था की माँग है। यहाँ की महिलाओं को उसी मानवीय व्यवस्था के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। अमानवीय समाज-व्यवस्था के प्रति व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, सभी स्तरों पर बहिष्कार करना चाहिए। श्री कामताप्रसाद गुप्त ने शब्द-चित्र खींचते हुए बहनों को दर्शन कराया कि मालिकी और हुकूमत की व्यवस्था ने दो विश्वयुद्ध करा दिये। अगर विश्वयुद्ध की पुनरावृत्ति नहीं चाहिए तो हुकूमत के स्थान पर प्रेम और मालिकी के स्थान पर सेवा के मूल्य को आचरण में लाना होगा। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि गांधी कोई विचार नहीं, आचार था। आचार लादा नहीं जाता, विचार लादा जाता है। जहाँ लादना है वहाँ हिंसा है, दबाव है। सुश्री राधाबहन ने उत्तराखण्ड में हुए शराबबन्दी-आन्दोलन के अनुभव सुनाये। प्रातःकालीन प्रार्थना के बाद मानसिक खुराक श्रद्धेय सुरेन्द्रजी से नियमित मिली। विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में जितने संत हो चुके, धर्म माने गये और शास्त्र रचे गये, उन सबकी सिखावनों का सार सहजता और सरलता से हमें प्राप्त हुआ। गृहस्थ-जीवन के सारे सम्बन्ध विश्व-बन्धुत्व के लिए सीढ़ियाँ हैं। अगर हमारा पारिवारिक जीवन जाति और संस्कार की मान्यताएँ मुक्ति के अभियान में बाधक हैं तो उन्हें त्यागने की क्षमता पैदा करनी चाहिए। नारी को अपने प्रेम, सहनशीलता, निष्ठा-जैसे मानवीय गुणों के बल से समाज में बढ़ती हुई पाशविक शक्तियों का सामना करना चाहिए। विकास की व्याख्या करते हुए श्री विचित्रनारायण शर्मा ने कहा कि गांधीजी के स्वराज्य एवं विकास की भूमिका में एक की जय एवं दूसरे की पराजय नहीं थी। वही निर्विरोध मानस एवं जीवन हमें लाना है।

इस प्रकार के निर्विरोध जन-जीवन के लिए ग्रामदान की व्यावहारिकता तथा क्रान्तिकारिता का सुन्दर चित्रण श्री कपिलभाई ने किया। गांधीजी के इस ग्राम-स्वराज्य को साकार स्वरूप देने के लिए उन्होंने बहनों का आह्वान किया। अन्त में श्री करण भाई और डा० सुशीला नैय्यर ने गांधी-शताब्दी वर्ष में काम करने के लिए बहनों से अपील की और सुझाव दिये।

—क्रान्तिबाला

www.vinoba.in

तत्त्वज्ञान

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को दी गयी फाँसी तथा गणेश शंकर विद्यार्थी के आत्म-बलिदान के प्रसंगों से क्षुब्ध कराची-कांग्रेस-अधिवेशन के लोगों को सम्बोधित करते हुए २६ मार्च १९३१ को गांधीजी ने कहा था :—

"जो तरुण यह ईमानदारी से समझते हैं कि मैं हिन्दुस्तान का नुकसान कर रहा हूँ, उन्हें अधिकार है कि वे यह बात संसार के सामने चिल्ला-चिल्लाकर कहें। पर तलवार के तत्त्वज्ञान को हमेशा के लिए तलाक दे देने के कारण मेरे पास अब केवल प्रेम का ही प्याला बचा है, जो मैं सबको दे रहा हूँ। अपने तरुण मित्रों के सामने भी अब मैं यही प्याला पकड़े हुए हूँ....।"

उसके बाद का इतिहास साक्षी है कि देश ने तलवार के तत्त्वज्ञान को तलाक देनेवाले गांधी का साथ दिया। साम्राज्य-वाद की नींव हिली, भारत में लोकतंत्र की नींव पड़ी और संसार को मुक्ति का एक नया रास्ता मिला।

संसार आज बन्दूक की नली के तत्त्वज्ञान से और अधिक त्रस्त हुआ है। विनोबा संसार को वही प्रेम का प्याला पिलाकर बन्दूक के तत्त्वज्ञान को तलाक दिलाना चाहता है और देश में सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिए उसने नया रास्ता बताया है।

क्या हम वक्त को पहचानेंगे और महान कार्य में वक्त पर योग देंगे ?

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति)
दुकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैंरू, जयपुर–३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

तरुण शांति-सेना

केवल शिकायत और सुझाव ही या और कुछ...?

तरुण-शान्ति-सेना के इस स्तम्भ का तरुण साथियों ने स्वागत किया है, जितनी आशा की जा सकती है, उतने तो नहीं, लेकिन कुछ तरुण शान्ति-सेवकों ने अपने उद्‌गार प्रकट किये हैं। उनमें से दो हम इस अंक में प्रकाशित कर रहे हैं।

पिछले पत्र में अभय बंग ने और इस पत्र में अनूपकुमार जैन ने संगठन-सम्बन्धी कुछ शिकायतें पेश की हैं, साथ ही सुझाव भी प्रस्तुत किये हैं। शिकायतें उनकी सही हैं, सुझाव भी अच्छे हैं, लेकिन इनके अतिरिक्त क्या? यह एक प्रश्न सहज ही उठता है कि शिकायतों को दूर कौन करेगा और सुझावों को अमल में कौन लायेगा? आज तो दुनिया का तरुण समाज केन्द्रिय संगठनों और बुजुर्ग नेताओं से अलग खुद अपने पथ की तलाश और अपने ही पुरुषार्थ से अपनी मंजिल का निर्माण करना चाहता है। यह इस युग की प्रगतिशील चेतना है।

युग की इस चेतना का दूर-दर्शन करके ही सर्वोदय-विचार के संगठनों की कल्पना संचालक-शक्ति के रूप नहीं संयोजक-सूत्र के रूप में की गयी है, और केन्द्रिय नेतृत्व की जगह गणसेवकत्व की बात कही गयी है। इसलिए आपसी विचार-विनिमय के लिए शिकायतें, सुझाव तो ठीक ही हैं, लेकिन हमें इससे आगे बढ़कर खुद ही शिकायतों को दूर करने और सुझावों को अमल में लाने की शक्ति पैदा करनी है। क्या नहीं? —हमराही

कुछ शिकायतें, कुछ सुझाव

श्री सम्पादकजी,

मैं २३ जून का 'भूदान-यज्ञ' पढ़ रहा था, उसमें तरुण-शान्ति-सेना का एक नया स्तम्भ आपने शुरू किया है, इसके लिए आपको बधाई!

अभय बंग भाई ने जो सुझाव तरुण-शान्ति-सेना के लिए दिये, वे बहुत ही अच्छे हैं। भाई इस पर विचार करना चाहिए।

आज मुझे दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि मैंने अपने जीवन में पहली बार कैम्प-जीवन में प्रवेश किया था। कैम्प में बहुत कुछ इच्छा लेकर गया, परन्तु इच्छाओं की पूर्ण पूर्ति नहीं हुई। अनुशासन नाम की चीज तो मैंने कैम्प में बिलकुल पायी ही नहीं। जब पिछली जुलाई '६८ में कैम्प से वापिस आया तो मैंने तथा वर्तमान संयोजक श्री सुरेशचन्द्रजी ने यहाँ केन्द्र स्थापित किया। हमने केन्द्र खोलने की सूचना अपने केन्द्रीय कार्यालय को भेजी, परन्तु वहाँ से महीनों जवाब नहीं आया। आज हमारे केन्द्र की संख्या १५ है, परन्तु यह बहुत कम है। आज हम आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं किन्तु सहयोग न मिलने के कारण हम पीछे रह जाते हैं। केन्द्रीय कार्यालय से कोई सम्पर्क नहीं रहता है। हमारे केन्द्र को इस वर्ष बहुत ही हानि हुई, जो कि एक वर्ष में जाकर पूरी होगी। पत्रों का जवाब समय से न मिलने के कारण हमारे शान्ति-सेवक इस वर्ष दोनों शिविरों से वंचित रह गये, इसका जिम्मेदार कौन? इसलिए मेरे कुछ सुझाव हैं। इन पर सब लोगों को गौर करना चाहिए, वरना तरुण-शान्ति-सेना के विकसित होने में बहुत समय लग जायगा। आज आप देश की स्थिति तो जानते ही हैं, हिंसात्मक सेनाओं को लोग याद रखते हैं। आज शिव-सेना का नाम किसी देशवासी से पूछ लीजिए!

सुझाव : १. जहाँ तरुण-शान्ति-सेना का केन्द्र खुले, वहाँ एक कार्यकर्ता समय-समय पर दौरा करे।

२. तीन महीने या इससे कम अवधि में केन्द्रों पर प्रान्तीय तथा केन्द्रीय पदाधिकारी लोग पहुँचें।

३. तरुण-शान्ति-सेना का साहित्य-केन्द्रों पर भेजा जाय।

४. गांधी-जन्म शताब्दी का वर्ष है, हर जिले में समितियाँ हैं, उनको प्रान्तीय कार्यालयों से निर्देश दिलवाये जायँ कि जहाँ तरुण-शांति-सेना का नया केन्द्र खुले, उसकी देखभाल करें, तथा केन्द्र स्थापित करने में मदद दें।

५. गांधी-जन्म-शताब्दी-समितियों का भेंट साहित्य उस जिले के केन्द्रों को मिले।

६. केन्द्रीय कार्यालय में पत्र-व्यवहार के लिए एक अलग कार्यकर्ता बैठाया जाय।

७. प्रचार का साहित्य भेजा जाय।

अब समस्या पैदा होगी कि पैसा कहाँ से लाया जाय? इसके लिए सुझाव है :

(अ) बच्चों के शिशु-मन्दिर खोलें।

(आ) प्रदर्शनी लगायें।

(इ) ड्रामा, पहलवानों की कुश्ती आदि कार्यक्रमों के द्वारा पैसे इकट्ठे किये जायँ।

अन्यथा सारी मेहनत बेकार हो जायेगी। कैम्प वर्ष में एक महीने के लिए लगता है, उसमें पैसा भी खर्च किया जाता है। परन्तु कमियों के कारण न तरुण लाभ उठा पाते हैं, न तो तरुण-शान्ति-सेना का विकास होता है। बम्बई के लिए यहाँ से पाँच फार्म भेजे थे। वहाँ से केवल एक रेल्वे-कन्सेशन फार्म भेजा गया। हमने कारण पूछा तो पता लगा कि एक हजार आवेदन आये थे। आखिर सबको शिविर में क्यों नहीं बुलाया गया? अगर सब लोग तरुण-शिविर में पहुँचते तो कितना विकास होता सेना का! आपके 'भूदान-यज्ञ' में बम्बई-सम्मेलन का स्वीकृत तरुण-शान्ति-सेना का घोषणा-पत्र प्रकाशित हुआ जो कि मूल अंग्रेजी से लिया गया है। क्या हिन्दी में घोषणा-पत्र प्रकाशित नहीं हुआ, कि आपको अंग्रेजी से लेना पड़ा?

—अनूपकुमार जैन, दस्तानायक,
तरुण-शान्ति सेना केन्द्र,
कटरा मान राय, बरेली

वर्धा में तरुण-शान्ति-सेना का सराहनीय अभिक्रम

आंध्र प्रदेश में पिछले माह में जो भयंकर बाढ़ व आंधी आयी उसके कारण मुसीबत में फँसे हुए लाखों भाइयों के आँसू पोंछने के लिए यहाँ के तरुण-शान्ति-सेना केन्द्र के २३ सदस्यों ने सतत चार घण्टे श्रमदान किया।

नौवाँ अखिल भारत तरुण-शांति-सेना शिविर, गोविंदपुर

www.vinoba.in

(संक्षिप्त कार्य-विवरण)

अखिल भारत शांति-सेना मण्डल ने पिछले कुछ वर्षों से तरुण-शांति-सेना के माध्यम से विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में एक नया प्रयास आरम्भ किया है। प्रति वर्ष स्थानीय, प्रदेशीय, क्षेत्रीय तथा अखिल भारतीय स्तर के शिविरों का आयोजन होता है, जिसके माध्यम से राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय महत्त्वपूर्ण समस्याओं की चर्चा तथा विशेषकर उसमें युवकों के दायित्व की ओर ध्यान आकर्षित करने का प्रयास रहता है। इस बार नौवाँ अखिल भारत तरुण-शांति-सेना शिविर उत्तरप्रदेश के मिर्जापुर जिला स्थित बनवासी सेवा आश्रम, गोविंदपुर में आयोजित किया गया था। शिविर में शिविरार्थियों की अपेक्षित संख्या से कम लोग आये। लेकिन प्रदेशवार प्रतिनिधित्व काफी अच्छा रहा—केरल ८, मध्यप्रदेश ३, मैसूर ५, उत्तरप्रदेश ३, तमिलनाडु २, पश्चिम बंगाल १, आंध्र २, बिहार १, महाराष्ट्र २, गुजरात ६, और राजस्थान १।

शिविर १ जून से १५ जून तक हुआ।

शिविर के सम्पूर्ण कार्यक्रम तीन भागों में विभाजित थे: १. बौद्धिक, २. क्रियात्मक, और ३. समूह जीवन।

बौद्धिक : शिविर में चर्चा के लिए निम्नलिखित विषय निश्चित थे और इन पर विभिन्न वक्ताओं ने व्याख्यान किये।

(१) जागतिक परिस्थिति, आणविक शस्त्रास्त्र तथा शांति,

(२) राष्ट्र-पुनर्निर्माण में युवकों का दायित्व,

(३) राष्ट्र-निर्माण के प्रयोग में ग्रामीण युवकों का योगदान,

(४) शांति-विचार तथा युवकों का योग, राष्ट्रीय परिस्थिति, प्रतिरक्षा और शांति तथा चरित्र-निर्माण,

(५) तरुण-शांति-सेना,

(६) भाषा-समस्या।

व्याख्यानों के अतिरिक्त शिविरार्थियों ने अलग-अलग गोष्ठियों में निम्नलिखित विषयों की चर्चा की—

(१) शिक्षा में क्रान्ति,

(२) भाषा-समस्या,

(३) छात्र राजनीति में भाग लें या न लें।

इन चर्चा-गोष्ठियों के अतिरिक्त कई प्रदेशों के शिविरार्थियों ने तीन अलग-अलग गोष्ठियों में विभाजित होकर भावी कार्यक्रम की रूप-रेखा की चर्चा की।

क्रियात्मक : (१) श्रम, (२) खेलकूद, (३) प्रार्थना तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम।

श्रम—यह शिविर मुख्य रूप से श्रम-शिविर ही रहा। प्रतिदिन चार घण्टे श्रम होता था। आरम्भ में २ जून से लेकर १० जून तक शिविरार्थियों ने प्रतिदिन चार घण्टे काम किये। मानसिक तैयारी तथा उत्साह होते हुए भी शारीरिक मर्यादा तथा थकान के कारण आखिर के ११ से १५ जून तक चार घण्टे के बजाय ढाई घण्टे श्रम-कार्य किया गया। कुल चार हजार घनफुट मिट्टी उठी। कुल १२० रु० का काम हुआ।

खेलकूद—यहाँ 'कितने भाई कितने', 'ऐसे कैसे', 'मछली जाल' आदि खेलों का आनन्द लिया गया। लेकिन मुख्यतः वालीबाल का ही आकर्षण रहा।

प्रार्थना तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम—शिविर में शांति-केन्द्र की सर्वधर्म-प्रार्थना सायंकाल होती थी, जिसमें प्रमुख धर्मों के मूलमंत्रों का हिन्दी रूपान्तर है। शिविरार्थियों के मानस पर इस प्रार्थना का बहुत अच्छा असर पड़ा।

प्रत्येक दिन रंजन-कार्यक्रम होता था। विभिन्न प्रदेशों के मित्रों द्वारा वहाँ के जन-जीवन की झाँकियाँ, लोकगीत तथा नृत्यों के रूप में वह पेश की जाती थी। आधुनिक रंजन के नमूने भी इस शिविर में आकर्षक रहे।

समूह जीवन : विभिन्न जाति, धर्म, संस्कारवाले युवक शिविर में इकट्ठा हुए थे। उनमें जोश-खरोश की कमी तो थी ही नहीं। आज के समाज में व्याप्त गुटबन्दी आदि के छूत से भी विद्यार्थी-समाज अलग कैसे रह सकता है; अतः १५ दिनों के सहजीवन में आपसी तनाव के कुछ प्रसंग उपस्थित हो जाना तो स्वाभाविक ही था। लेकिन अन्ततः इस अनेकता में एकता का ही स्वर गुंजन करता सुनाई पड़ा। कुछ को नये मित्र मिले, कुछ की पुरानी मैत्री और प्रगाढ़ बनी तथा १५ दिनों तक सुबह से शाम तक एक परिवार जैसे वातावरण में रहकर परस्पर-मैत्री तथा सद्भावना लेकर एक-दूसरे से विदा हुए।

शिविर की अवधि में एक दिन शिविर की सम्पूर्ण व्यवस्था तथा संचालन शिविरार्थियों के ही हाथों में रहा।

शिविर की स्थानीय व्यवस्था बनवासी सेवा आश्रम की ओर से ही हुई थी। आश्रम के संयुक्त मंत्री श्री प्रेम भाई ने अपने साथियों सहित काफी परिश्रम तथा उत्साहपूर्वक निवास, भोजन, स्नान, आदि की तैयारी की थी।

समापन-समारोह : १५ जून को सायं ४ बजे से समावर्तन-कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री मनमोहन चौधरी ने की। शिविर की पूर्णाहुति करते हुए श्री मनमोहन चौधरी ने यह बताया कि ऐसे शिविरों में मैं स्वयं प्रेरणा लेने के लिए आता हूँ। हमारी साधना में ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग का जो उल्लेख है, उसकी तीनों प्रकार की साधना आधुनिक रूप में हमें इस प्रकार के शिविरों में प्राप्त होती है।

अन्त में राष्ट्रगान से कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

—अमरनाथ

श्रमदान से मिली मजदूरी आंध्र प्रदेश के इन आपत्तिग्रस्त भाइयों की सहायता के लिए भेजी जा रही है।

इसके अलावा यहाँ के तरुण-शान्ति-सेना सदस्यों ने लगातार चार-पाँच दिन वर्षा में घूमकर करीब साढ़े आठ सौ रुपये इस काम के लिए इकट्ठे किये हैं।

वर्धा में तरुण-शान्ति-सेना का एक केन्द्र शुरू किया गया है। उसमें शरीक होने के लिए हर तरुण-तरुणी का स्वागत है।

(अशोक बंग के एक पत्र से)

तरुण-शान्ति-सेना प्रशिक्षक-शिविर

www.vinoba.in

बिहार तरुण-शान्ति-सेना द्वारा आयोजित प्राध्यापकों तथा अध्यापकों के शिविर से अपेक्षा यह थी कि ये अध्यापक जब शिविर से वापस जायेंगे तो तरुणों का मार्गदर्शन करेंगे और अपने-अपने विद्यालयों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में तरुण शान्ति-सेना का संगठन करेंगे। पूरे बिहार से चुने हुए ५० शिक्षकों का शिविर हो, इस निश्चय के साथ विद्यालयों को यह निमंत्रण भेजा गया था। अपेक्षा यह रखी गयी थी कि विद्यालयों से एक शिक्षक २२ जून से २९ जून तक होनेवाले बिरौली रूरल इंस्टिच्यूट के शिविर में शामिल होंगे। जिन शिक्षकों से व्यक्तिगत परिचय था उन्हें सीधे निमंत्रण भेजा गया था। निमंत्रण १०० भेजे गये थे, लेकिन यह माना गया था कि ५० लोगों का ही यह शिविर होगा। राजकीय शिक्षा-विभाग ने भी अपने अन्तर्गत चलनेवाले विद्यालयों को परिपत्र भेजा था कि बिहार तरुण-शान्ति-सेना द्वारा आयोजित एक सप्ताह के शिविर में उनका एक शिक्षक अवश्य भेजा जाय। शिविर में भाग लेनेवाले शिक्षकों के मार्गव्यय के लिए २५ रुपये तक तथा भोजन के लिए भी २५ रुपये की व्यवस्था शिक्षा-विभाग की ओर से की गयी थी। कुछ ऐसे शिक्षक, जिनकी रुचि तरुण-शान्ति-सेना के काम में पहले से ही थी, वे भी इस शिविर में अपने निजी खर्च से शामिल हुए थे।

आंधी और तूफान के कारण बिरौली रूरल इंस्टिच्यूट में शिविर करना सम्भव नहीं हो सका, इसलिए वह लक्ष्मीनारायणपुरी, पूसारोड में रखा गया।

शिविर का प्रारम्भ २२ जून की शाम को हुआ। श्री नवल बाबू ने शिविर के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए बताया कि बिहार में तरुण-शान्ति-सेना का कितना काम हुआ है। श्री द्वारका बाबू ने, जो बिहार तरुण-शान्ति-सेना के उपाध्यक्ष हैं, तरुण-शान्ति-सेना के उद्देश्य को स्पष्ट किया और, श्री जयप्रकाशजी से अनुरोध किया कि वे शिविरार्थियों का उद्बोधन करें।

श्री जयप्रकाशजी ने अपने उद्घाटन-भाषण में अपनी यह आशा व्यक्त की कि यद्यपि आज तरुण-शान्ति-सेना एक छोटी-सी संस्था है, लेकिन जल्द ही देश की सभी शिक्षा-संस्थाओं में तरुण-शान्ति-सेना स्थापित होगी और इसमें लाखों तरुण शामिल होंगे। उन्होंने कहा कि तरुण-शान्ति-सेना को सामाजिक क्रान्ति का एक माध्यम के रूप में ही मैं देखता हूँ। फिर आगे उन्होंने बताया कि सामाजिक क्रान्ति कहते किसे हैं और क्रान्ति की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएँ क्या हैं। कत्ल, कानून, और करुणा की क्रान्ति-पद्धति में कौनसी पद्धति आज की सामाजिक, वैज्ञानिक, परिस्थिति में उपयुक्त और सम्भव है। इस विषय पर श्री जयप्रकाशजी ने तीन प्रवचन किये और तीनों प्रवचनों में काफी विस्तार के साथ इस विषय का विवेचन किया।

इस शिविर में लगभग सम्मेलन का ही वातावरण बना रहा; क्योंकि श्रम, सफाई, शिविर-अनुशासन आदि कार्यक्रमों को शिविर में शामिल विद्वान शिक्षकों की उम्र, प्रतिष्ठा तथा उनके अभ्यास का लिहाज करके गौण रखना पड़ा। हालांकि श्रम का कार्यक्रम रखा जाता तो सभी शिक्षक खुशी के साथ श्रम करते और जिस ढंग का वहाँ भोजन मिला उसके पचने में मदद मिल जाती। ऐसा संकोच स्वयं शिविर के संयोजकों का था। भोजनालय ने तो उनकी प्रतिष्ठा का पूरा-पूरा ध्यान रखा। मेजमानों ने एलान किया कि 'मिथिला को आतिथ्य का जो सौभाग्य प्राप्त है उससे हमें वंचित न करें। इसलिए आप केवल भोजन करें, पत्तल हम फेंकेंगे। भोजनालय की सफाई हम करेंगे।' हम अपनी परम्परा को क्यों छोड़ें! शिविर-संचालक महोदय ने बार-बार भोजनालय-व्यवस्थापक से कहा कि शिविर का अपना कुछ नियम है, अनुशासन है इसलिए भोजन परोसने, भोजनालय की सफाई, जूठा पत्तल अपने उठाने की छूट दी जानी चाहिए। लेकिन मिथिला का आग्रह अन्त तक नहीं समाप्त हुआ। भोजन-व्यवस्था से सन्तुष्ट शिविरार्थियों को यह कहते सुना गया कि यह शिविर है या बारात!

शिविर के तीसरे दिन शिविर को शिविर का रूप देने की कोशिश की गयी और प्रार्थना, खेल-कूद, योगासन, रेलीपोस्ट शिविर-कार्यक्रम में शामिल किये गये। शिविर-व्यवस्था के लिए अलग-अलग दस्ते बने।

२३ जून को श्री रामनन्दन मिश्रजी आये। उन्होंने अपने प्रवचन में आध्यात्मिक मूल्यों को जीवन में स्थापित करने पर बल दिया और कहा कि इसके बिना सर्वोदय-आन्दोलन का स्रोत सूख जायेगा।

प्रो० श्री रामजी बाबू ने आचार्यकुल के उद्देश्य तथा उसकी कार्य-पद्धति को स्पष्ट किया और शिक्षक साथियों से निवेदन किया कि आचार्यकुल की स्थापना तरुण शान्ति-सेना के साथ-साथ की जानी चाहिए।

आचार्य श्री राममूर्तिजी ने विद्यार्थियों के विश्वव्यापी विद्रोह का विश्लेषण किया और कहा कि तरुण, स्त्री और मजदूर, तीनों मुक्ति चाहते हैं। दूसरे दिन आचार्यजी ने ग्रामस्वराज्य के औचित्य पर प्रकाश डाला और इसमें आचार्यकुल तथा तरुण शान्ति-सेना का क्या रोल हो सकता है, इसे स्पष्ट किया।

श्री धीरेन्द्र मजूमदार के लिए 'शिक्षा में क्रान्ति' विषय रखा गया था। इस विषय को समझाते हुए उन्होंने कहा कि सामाजिक परिस्थिति बदले बिना शिक्षा में परिवर्तन संभव नहीं है। शिक्षक शिक्षा में परिवर्तन चाहता है तो उसे समाज-परिवर्तन के काम में लगना होगा। शिक्षा में परिवर्तन की माँग लोक की तरफ से हो इसके लिए शिक्षक का काम है लोक-चेतना पैदा करना।

श्री नारायण देसाई ने युवक-क्रान्ति के तत्त्व और दिशा की स्पष्ट व्याख्या की। दुनिया के १४ देशों के युवक-विद्रोहों के स्वरूप और तरीके के उदाहरण से युवक-विद्रोहों को समझने में काफी आसानी हुई।

आखिर के दिनों में शिविरार्थी अधिक खुले और उन्होंने परस्पर-सामीप्य का अनुभव किया। अगर शिविरार्थियों का निवास एक स्थान पर रखा गया होता तो परस्पर-मैत्री का अवसर मिलता।

शिविर के आयोजनकर्ताओं की इस शिविर के बारे में जैसी कल्पना थी वैसा शिविर नहीं हुआ। पूरे बिहार से शिक्षकों के शामिल होने की आशा थी, लेकिन कुछ जिलों के ही शिक्षक आये, जो निम्नानुसार है: दरभंगा २७, भागलपुर १, मुजफ्फरपुर ४, सारण ६, चम्पारण १, मुंगेर १। महाविद्यालयों से ५, उच्चतर विद्यालयों से २२, बुनियादी विद्यालयों से ७, तथा शिक्षक-प्रशिक्षक विद्यालयों से ६ शिक्षक आये। कुल ४० शिविरार्थी थे। इस प्रकार यह शिविर राज्य-स्तर का न होकर क्षेत्रीय स्तर का शिविर ही रहा। शिविर-आयोजकों को यह महसूस हुआ कि आगे शिविरों का आयोजन छोटे क्षेत्रों का ही होना चाहिए।

भोजन आदि के खर्च का भार कई संस्थाओं तथा लोगों ने मिलकर उठा लिया था।

२६ जून को श्री रामश्रेष्ठ राय की अध्यक्षता में शिविर का समापन-समारोह सम्पन्न हुआ। शिविरार्थियों ने अपने हृदय के उद्गार प्रकट किये कि काफी ऊँचे स्तर की बौद्धिक खुराक उन्हें मिली है और उनका आकर्षण इस आन्दोलन की ओर हुआ है।

श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने अपने समारोप-भाषण में कहा कि यह सर्वोदय की क्रान्ति साधनों की नहीं, सम्बन्धों की क्रान्ति है। अगर साधनों की क्रान्ति हुई, विपुलता बढ़ी और सम्बन्ध नहीं बदले तो संघर्ष की स्थिति ही पैदा होगी। उसमें से शान्ति की स्थापना नहीं होगी। उन्होंने कहा कि जो शिक्षक-समुदाय १० रुपये की महँगाई के लिए आन्दोलन कर सकता है वह अपनी मुक्ति के लिए क्यों न आन्दोलन खड़ा करे?

श्री रामश्रेष्ठ राय ने प्राथमिक पाठशालाओं में शान्ति-सेना की स्थापना पर जोर दिया और कहा कि उसका चाहे जो भी नाम दिया जाय। समस्तीपुर अनुमण्डल में तरुण शान्ति-सेना का सुनियोजित कार्यक्रम चले, ऐसी उन्होंने अपनी आकांक्षा व्यक्त की। इसके लिए उन्होंने अपना पूरा सहयोग देने का निश्चय बताया।

शिविर की समाप्ति इस संकल्प के साथ हुई कि सब अपने-अपने विद्यालय में तरुण शान्ति-सेना का संगठन करेंगे। —कृष्णकुमार

एक हजार पृष्ठों का साहित्य पाँच रुपये में

प्रत्येक हिन्दीभाषी परिवार में बापू की अमर और प्रेरक वाणी पहुँचनी चाहिए। गांधी-वाणी या गांधी-विचार में जीवन-निर्माण, समाज-निर्माण और राष्ट्र-निर्माण की वह शक्ति भरी है, जो हमारी कई पीढ़ियों को प्रेरणा देती रहेगी, नये मूल्यों की ओर अग्रसर करती रहेगी। परिवार में ऐसे साहित्य के पठन, मनन और चिन्तन से वातावरण में नयी सुगन्धि, शान्ति और भाईचारे का निर्माण होगा।

गांधी जन्म-शताब्दी के अवसर पर हम सबकी शक्ति इसमें लगनी चाहिए।

हजार पृष्ठों का आकर्षक चुना हुआ गांधी-विचार-साहित्य पाँच रुपये में हर परिवार में जाय, इसका संयुक्त प्रयास गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान और सर्व सेवा संघ की ओर से हो रहा है। हर संस्था और व्यक्ति, जो गांधी-शताब्दी के कार्य में दिलचस्पी रखते हैं, इस सेट के अधिकाधिक प्रसार-कार्य में सहयोगी होंगे, ऐसी आशा है। इस प्रयास में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों का सहयोग भी अपेक्षित है।

रं० रा० दिवाकर
अध्यक्ष,
गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान

एस. जगन्नाथन्
अध्यक्ष,
सर्व सेवा संघ

विचित्र नारायण शर्मा
अध्यक्ष, उ० प्र० गांधी-शताब्दी समिति

राधाकृष्ण बजाज
संचालक, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

गांधी जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य सेट

पुस्तक	लेखक	पृष्ठ	मूल्य
१. आत्मकथा (संक्षिप्त)	: गांधीजी	२००	१·००
२. बापू-कथा (सन् १९२१-१९४८)	:	२४०	२·००
३. गीता-बोध, मंगल प्रभात	: गांधीजी	१३०	१·२५
४. मेरे सपनों का भारत	: गांधीजी	१५०	१·२५
५. तीसरी शक्ति (सन् १९४८-१९६९)	: विनोबाजी	२४०	२·००
	कुल :	९६०	७·५०

आवश्यक जानकारी

१. इस 'गांधी जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य' के सेट में कुल मिलाकर पाँच पुस्तकें होंगी, जिनका मूल्य रु० ७ से ८ तक होगा। यह पूरा सेट रु० ५) में मिलेगा।

२. इन सेटों की बिक्री २ अक्तूबर के पावन-दिवस से प्रारम्भ होगी।

३. चालीस सेटों का एक बंडल बनेगा। एक बंडल से कम नहीं भेजा जा सकेगा।

४. चालीस या अधिक सेट मँगाने पर प्रति सेट ५० पैसे कमीशन मिलेगा।
(सारे सेट फ्री डिलीवरी यानी निकटतम रेलवे-स्टेशन-पहुँच भेजे जायँगे।)

५. सेटों की अग्रिम बुकिंग १ जुलाई १९६९ से शुरू हुई है। अग्रिम बुकिंग के लिए प्रति सेट रु० २) के हिसाब से अग्रिम भेजने चाहिए। शेष रकम की प्राप्ति के लिए रेलवे रसीद वी० पी० या बैंक के मार्फत भेजी जायगी। सेट उधार नहीं भेजे जायँगे और वापस भी नहीं लिये जायँगे।

६. सेटों की रकम तथा आर्डर निम्नलिखित पते से ही भेजें :

तार : 'सर्वसेवा']

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

[फोन : ४२८५

भूदान-यज्ञ ७-७-'६९ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] खाद्यसेम्स नम्बर ए ३४

www.vinoba.in

राँची में दूसरा प्रखंडदान

अपेक्षित गति से काम को आगे बढ़ाने का प्रयास जारी

बिहारदान की मंजिल तक पहुँचने में सबसे कठिन क्षेत्र छोटानागपुर अनुमण्डल साबित हो रहा है। राँची जिला इस कठिन चढ़ाई में कठिनतम माना जा सकता है। लेकिन इस जिले में भी जून के आखिरी सप्ताह में दूसरा प्रखण्डदान—बुण्डु—घोषित हुआ। इसके पूर्व बोलवा नामक प्रखण्डदान हो चुका है। बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति के सहमंत्री श्री कैलाश प्रसाद शर्मा से हुई बातचीत के अनुसार यद्यपि अभी आदिवासी नेता अनुकूल नहीं हो पाये हैं, और अपेक्षित गति से काम आगे नहीं बढ़ पा रहा है। ३० जून को आदिवासी लोगों की विशेष परिस्थिति को सामने रखकर ग्रामदान अधिनियम में संशोधन करने हेतु सम्बन्धित अधिकारियों की एक बैठक राँची में ही आयोजित की गयी। इस क्षेत्र में काम कर रहे बिहार के लगभग १०० कार्यकर्ताओं की द्विदिवसीय बैठक २, ३ जुलाई को इस समस्या पर सामूहिक चिंतन हेतु आयोजित की गयी। इस प्रकार काम को अपेक्षित गति से आगे बढ़ाने का प्रयास जारी है।

हजारीबाग जिलादान-अभियान

हजारीबाग जिले में जिलादान-अभियान तीव्र गति से चल रहा है। पटना जिले से ३० कार्यकर्ता तथा गया से २० कार्यकर्ता ग्रामदान-प्राप्ति समिति की मदद करने के लिए पहुँच गये हैं। ग्रामदान-अभियान का काम विशेष जोर देकर किया जा रहा है, ताकि १५ जुलाई '६९ तक जिलादान का काम अवश्य सम्पन्न हो।

उपायुक्त श्री प्रभार कुमार मिश्रजी ने इस जिले के सभी प्रखण्ड-विकास पदाधिकारी से ग्रामदान में पूरा-पूरा सहयोग देने के लिए परिपत्र जारी किया है। इसी तरह का परिपत्र डा० रामाशीष सिंह, जिला शिक्षक पदाधिकारी ने भी जारी किया है तथा इस जिले के सभी शिक्षा-प्रसार पदाधिकारीगण से अनुरोध किया है कि ग्रामदान के काम में वे सक्रिय सहयोग दें। अभी तक हर जिले के ४२ प्रखण्डों में से १३ प्रखण्डों का प्रखण्डदान घोषित हो चुका है। शेष २९ प्रखण्डों का दान आगामी १५ जुलाई '६९ तक होने की आशा है। यह स्मरणीय है कि आचार्य विनोबा ने गत मई '६९ तक इस जिले का जिलादान होने की आशा रखी थी, परन्तु कार्यकर्ताओं के अभाव में यह पूरा नहीं हो सका।

—श्याम प्रकाश सिंह
संयोजक,
जिला ग्रामदान-प्राप्ति समिति, हजारीबाग

सीकर (राजस्थान) जिले में ग्रामदान-अभियान

राजस्थान के सीकर जिले में ८ से १३ जुलाई तक दो प्रखण्डों—माधूपर तथा खण्डेला—में ग्रामदान-अभियान चलाया जायगा। श्रीमती सौंपी बहन के पत्रानुसार इसी जिले के नीमका थाना में सभाओं के संगठन का अभियान भी चल रहा है। अब तक ३३ ग्राम-सभाएँ बन चुकी हैं।

जयपुर जिला सर्वोदय-मंडल का संकल्प

जयपुर (डाक से), २६ जून। गांधी-शताब्दी के विभिन्न कार्यक्रमों के मध्य जयपुर जिला सर्वोदय-मंडल ने अपनी विशेष बैठक में यह संकल्प जाहिर किया कि गांधी-जयन्ती तक जयपुर जिले की समस्त पंचायत-समितियों में ग्रामदान के विचार का प्रचार किया जायेगा तथा सब तहसीलों में ग्रामदान के संकल्प प्राप्त किये जायँगे।

जिला सर्वोदय-मंडल ने अहिंसा एवं लोकतंत्र में विश्वास रखनेवाले सब भाई-बहनों को आमंत्रित किया है कि वे ग्रामदान-अभियान में समय और शक्ति लगायें। इसके लिए हर प्रखण्ड में जुलाई माह से अभियान प्रारम्भ किया जायेगा। प्रारम्भिक तैयारियाँ चालू हो गयी हैं।

रतलाम (म० प्र०) में जिलादान की तैयारी

श्री मानव मुनि के पत्रानुसार रतलाम जिले में जिलादान की हवा बनाने के लिए प्रथम चरण में रतलाम, बाजना, और सैलाना प्रखण्डों में प्रखण्ड-स्तरीय शिविर सम्पन्न हुए। इन शिविरों में मुख्यतः सरपंच, सचिव, पटवारी, ग्रामसेवक तथा शिक्षकों ने भाग लिए। मध्य प्रदेश गांधी स्मारक निधि के संचालक श्री काशिनाथ त्रिवेदी का मार्गदर्शन मिला। शिविरों के बाद अभियानों का भी सिलसिला चला। लगभग १२५ प्रतिनिधियों ने प्रत्येक शिविर में भाग लिया।

सर्व सेवा संघ का कैम्प कार्यालय

सर्व सेवा संघ का कैम्प कार्यालय गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) में शुरू हुआ है। सबसे प्रार्थना है कि कृपया आगे से ग्रामदान-आन्दोलन, संगठन एवं मंत्री से सम्बन्धित पत्र-व्यवहार गोपुरी के निम्न पते पर करने का कष्ट करें:

सर्व सेवा संघ,
कैम्प कार्यालय,
गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र)
फोन नं० : ४९
तार : 'सर्वसेवा'

Sarva Seva Sangh,
Camp office,
Gopuri. Wardha,
(Maharashtra)

—ठाकुरदास बंग
मंत्री,

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।

श्रीकृष्णपुत्र भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।